ऋग्वेद

यजुर्वेद

ओ३म्

अग्निहोत्र विशेषांक

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 15 (मासिक)
₹ 150 (वार्षिक)

वर्ष : 28 फाल्गुन-चैत्र वि0स0 2072 मार्च 2016 अंक : 03

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून

वजन: 50 ग्राम

स्व. बावा गुरमुख सिंह

संस्थापक- वैदिक साधन आश्रम तपोवन

महात्मा आनन्द स्वामी जी
प्रथम संरक्षक

डॉ. स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी
वर्तमान संरक्षक

वैदिक साधन आश्रम तपोवन,

नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद

अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

नालापानी, देहरादून - 248008, दूरभाष: 0135-2787001

ग्रीष्मोत्सव (अथर्ववेद यज्ञ एवं योग साधना शिविर)
बैशाख शुक्ल पक्ष पंचमी से बैशाख शुक्ल पक्ष नवमी विक्रमी सम्वत् 2073 तक
तदनुसार बुधवार 11 मई से रविवार 15 मई 2016 तक मनाया जायेगा।

यज्ञ के ब्रह्मा एवं योग साधना निदेशक : स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी महाराज

समापन समारोह के मुख्य अतिथि - आचार्य डॉ. देवव्रत जी, महामहिम राज्यपाल हिमाचल प्रदेश

प्रवचनकर्ता	:	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
वेद पाठ	:	महर्षि दयानन्द आर्ष ज्योर्तिमठ गुरूकुल पौंधा देहरादून के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ एवं अन्य कार्यक्रमों के संयोजक	:	श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी एवं सुश्री सुनीता
भजनोपदेशक	:	डॉ. कैलाश कर्मठ एवं श्री सुचित नारंग

बुधवार 11 मई से रविवार 15 मई 2016 तक प्रतिदिन

योग साधना	:	प्रात: 5.00 बजे से 6.00 बजे तक
संध्या एवं यज्ञ	:	प्रात: 6.30 बजे से 8.30 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	प्रात: 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
यज्ञ एवं संध्या	:	सायं 3.30 बजे से 6.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	रात्रि 7.30 बजे से 9.30 बजे तक

ध्वजारोहण	- बुधवार 11 मई 2016 को प्रात: 9:00 बजे।
गायत्री यज्ञ	- बुधवार 11 मई 2016 को प्रात: 10 से 12 बजे तक
युवा सम्मेलन	- गुरूवार 12 मई 2016 को प्रात: 10:00 बजे से 1:00 बजे तक
उद्बोधन	- आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य एवं आचार्य डॉ. धनन्जय जी
महिला सम्मेलन	- शुक्रवार 13 मई 2016 को प्रात: 10:00 बजे से 1:00 बजे तक
संयोजिका	- श्रीमती सन्तोष रहेजा जी (दिल्ली)
उद्बोधन	- डॉ. अन्नपूर्णा, डॉ. सुखदा सोलंकी, श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा एवं श्रीमती सरोज आर्या जी आदि
शोभायात्रा	- शनिवार 14 मई 2016 को प्रात: 10 बजे तपोभूमि के लिये शोभायात्रा जायेगी
संयोजक	- श्री मंजीत सिंह जी
भजन संध्या	- शनिवार 14 मई 2016 को रात्रि 8 बजे से 10 बजे तक
भजनोपदेशक	- डॉ. कैलाश कर्मठ एवं श्रीमती मीनाक्षी पंवार
पूर्णाहुति एवं ऋषिलंगर	- रविवार 15 मई 2016 को यज्ञ के उपरांत महामहिम राज्यपाल जी द्वारा नवनिर्मित सत्संग भवन का उद्‌घाटन किया जायेगा तत्पश्चात् भजन, प्रवचन एवं ऋषिलंगर।

नोट : यज्ञ के अतिरिक्त समस्त कार्यक्रम महात्मा प्रभु आश्रित सत्संग भवन में सम्पन्न होंगे।

बस सेवा: रेलवे स्टेशन से तपोवन आश्रम नालापानी के लिए हर समय बस उपलब्ध रहती है।

सप्रेम आमंत्रण

आदरणीय महोदय/महोदया, स्व. बाबा गुरुमुख सिंह जी एवं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी, स्वामी योगेश्वरानन्द जी परमहंस एवं महात्मा प्रभु आश्रित जी ने तपोवन आश्रम को साधना के लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना था। आपसे प्रार्थना है कि परिवार व ईष्ट मित्रों सहित यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित होकर हमें कृतार्थ करें एवं अपने-अपने समाज/धार्मिक सत्संगों से यह निमंत्रण हमारी ओर से निवेदित करने की कृपा करें। आपके उदार सहयोग के लिए अग्रिम धन्यवाद।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, सन्तोष रहेजा, सुधीर कुमार माटा, मंजीत सिंह, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, मनीष बावा, महेन्द्र सिंह चौहान, अशोक वर्मा, विजय कुमार, रामभज मदान।

एवं समस्त सदस्य, वैदिक साधन आश्रम सोसायटी

ओ३म्

पवमान

वर्ष—28 अंक—3

फाल्गुन—चैत्र 2072 विक्रमी मार्च 2016

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,116 दयानन्दाब्द : 192

★

—: संरक्षक :—

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

★

—: अध्यक्ष :—

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

—: सचिव :—

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

—: आद्य सम्पादक :—

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

—: मुख्य सम्पादक :—

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 08755696028

★

—: सम्पादक मण्डल :—

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

—: कार्यालय :—

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून—248008

दूरभाष : 0135—2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	3
पर्यावरण संरक्षण.......	शिवदेव आर्य	4
अग्निहोत्र का दार्शनिक आधार	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	5
अग्निहोत्र से अनेक लाभ..........	मनमोहन कुमार आर्य	7
यज्ञ और अग्निहोत्र........	यज्ञ मीमांसा से साभार	10
यज्ञ का रोगाणु—गणनांक.......	डॉ० जगदीश प्रसाद	11
महर्षि दयानन्द की दृष्टि.......	डॉ० रामप्रकाश शर्मा	13
महर्षि दयानन्द और यज्ञ	डॉ० सत्यव्रत राजेश	15
दयानन्द यजुर्भाष्य में यज्ञ का स्वरूप	डॉ० वीरेन्द्र कुमार अलंकार	19
हवि एक अंक................	महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज	23
शक्तिहीनता		24
औषधि—विज्ञान में यज्ञ का प्रयोग	डॉ० जगदीश प्रसाद	27
मर्यादापालक कैसा हो	दयानन्द दृष्टान्त मणिका से साभार	28
अहंकार विजयी कौन	दयानन्द दृष्टान्त मणिका से साभार	29
युवाओं हेतु दिव्य जीवन निर्माण शिविर		30
विशाल वेद प्रचार शिविर		31
दानदाताओं की सूची		32

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. ''वैदिक साधन आश्रम''	कैनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. ''पवमान''	कैनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. ''वैदिक साधन आश्रम''	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन''	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000/— प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000/— प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000/— प्रति माह

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

यज्ञ की महिमा

यज्ञ शब्द 'यज्' धातु से निष्पन्न होता है और इसके देवपूजा, संगतिकरण और दान ये तीन अर्थ होते हैं, जो इस शब्द में अन्तर्निहित हैं। तीनों शब्द बहुत अधिक व्यापक अर्थों और भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। महर्षि ने अपने समस्त ग्रन्थों और वेदभाष्य में इन शब्दों में अन्तर्निहित व्यापक अर्थों और भावों को यज्ञ के परिपेक्ष्य में वर्णित किया है। महर्षि ने केवल होम करने को ही यज्ञ नहीं माना है अपितु कहा है कि मनुष्यों को चाहिए कि संसार के उपकार के लिए जैसे विद्वान् लोग अग्निहोत्र यज्ञ का आचरण करते हैं, वे वैसे अनुष्ठान करें। (यजु0 १७.५५) महर्षि ने यज्ञ का पठन–पाठनरूप भी हमारे समक्ष रखा है। वे कहते हैं कि जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन–पाठन रूप यज्ञकर्म करने वाला मनुष्य है, वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा सन्तोष करने वाला होता है, इसलिए ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है। (यजु0 ७.२७) प्रजापति ने स्वयं यज्ञ के द्वारा इस ब्रह्माण्ड को प्रादुर्भूत किया है। पुरुष सूक्त में सृष्टि के प्रारम्भ में यज्ञ का चित्रण करते हुए कहा गया है कि सृष्टि के आरम्भ में होने वाले इस यज्ञ में प्रजापति ने वसन्त को आज्य, ग्रीष्म को समिधाएं ओर शरद को हवि बनाकर प्रस्तुत किया था। इस प्रकार सृष्टि का मूल उद्गम यज्ञ ही है। इसी सूक्त के एक अन्य मंत्र में यज्ञ की सात परिधियां और इक्कीस समिधाएं प्रतिपादित की गई हैं। महर्षि ने वेद मंत्रों का भाष्य करते समय कई स्थलों पर यज्ञ करने के प्रयोजन का उल्लेख करते हुए, इससे पर्यावरण और अन्तःकरण की शुद्धि, कामनाओं की पूर्ति और सुख प्राप्ति बताई है। यज्ञ का प्रयोजन प्राणिमात्र का कल्याण है और जो विज्ञान प्राणिमात्र के लिए होता है, वह यज्ञ कहलाता है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है—**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।** यज्ञ न केवल प्राणिजगत् की उत्पत्ति का मूल है अपितु उसके अस्तित्व का मूलाधार भी है। प्राचीन महर्षियों ने न केवल वर्तमान समय की विभिन्न प्रकार की समस्याओं की कल्पना की थी, अपितु उनके समाधान भी अपनी दूरदृष्टि से हमारे सम्मुख प्रस्तुत किए थे। इन्हें अग्निहोत्र के नाम से अभिहित किया गया है। अथर्ववेद में जल चिकित्सा, उन्माद चिकित्सा, ज्वर चिकित्सा, कीटाणु विनाश, आदि कई उपचार और ऋग्वेद में पुत्र–प्राप्ति (५.२५.५) और वृष्टियज्ञ किए जाने हेतु वर्षकामेष्टि सूक्त (१०/९८) मिलता है। क्रियात्मक पक्ष में महर्षि दयानन्द ने संस्कारविधि में होम के चार प्रकार के द्रव्य बताए हैं– प्रथम सुगन्धितकारक, द्वितीय पुष्टिकारक, तृतीय मिष्टकारक और चतुर्थ रोगनाशक। अग्निहोत्र का वास्तविक स्वरूप परोपकार, सेवा, सदाचार, सहृदयता, त्याग, आत्म निर्माण, उदारता आदि को जीवन में चरितार्थ करना है। शास्त्रों में यज्ञ शब्द के तीन अर्थ बताए गए हैं– १. देवपूजा, २. संगतिकरण और ३. दान। इन्हें व्यक्ति एवं समाज निर्माण के तीन महत्त्वपूर्ण आधार माना जा सकता है। यज्ञ में सन्निहित इन आधारों को अपनाकर नवनिर्माण की आधारशिला तैयार की जा सकती है। अग्निहोत्र के सैद्धान्तिक और क्रियात्मक पक्षों पर विचार किया गया है। दार्शनिक पक्ष पर इसी अंक में अन्यत्र लेख दिया गया है। अग्निहोत्र के विभिन्न पक्षों पर विचार करते हुए, यह अग्निहोत्र विशेषांक सुधि पाठकों को समर्पित है।

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

❁ वेदामृत ❁

मानव शरीररूपी यज्ञशाला

सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्रजौ सत्रसदौ च देवौ।।

यजु० 34/55

ऋषिः कण्वः।। देवता– अध्यात्मं प्राणाः।। छन्दः– भुरिग्जगती।।

विनय– यह शरीर भगवान् ने तुझे यज्ञ करने के लिए दिया है। यह देह पवित्र यज्ञशाला है। इसमें बैठे हुए सात ऋषि भगवान् का यजन कर रहे हैं। आँख देख रही है, कान सुन रहा है, नासिका सूँघ रही है, त्वचा स्पर्श कर रही हैं, जिह्वा रस ले रही है, मन मनन कर ज्ञान करते हुए, मनन कर रहा है और बुद्धि निश्चय कर रही है ये सातों ऋषि शब्द, रूप, गन्ध, स्पर्श, रस का ज्ञान करते हुए, मनन और अवधारण करते हुए अपनी इन ज्ञान–क्रियाओं द्वारा भगवान् का यजन कर रहे हैं। ये ज्ञानशक्तियाँ हमारे अन्दर भगवद्‌यजन के लिए ही रखी गई हैं। हमारी प्रत्येक ज्ञान–प्राप्ति भगवत्प्राप्ति के लक्ष्य से ही होनी चाहिए और इन सातों ज्ञानेन्द्रियों (बाह्य और अन्दर के कारणों) के साथ एक–एक प्राणशक्ति भी काम कर रही है, जिन्हें सात शीर्ष प्राण कहते हैं। ये सात प्राण इस 'सद' की – इस यज्ञशाला की रक्षा पूरी सावधानता के साथ, बिना प्रमाद किये कर रहे हैं। इस प्रकार इस यज्ञशाला में निरन्तर यह यज्ञ चल रहा है। हम हमेशा कुछ–न कुछ ज्ञान (अनुभव) करते रहते हैं– देखते, सुनते या मनन आदि करते रहते हैं। स्वप्रावस्था में भी यह देखना–सुनना बन्द नहीं होता। हाँ, सुषुप्ति–अवस्था में जब इन सात ऋषियों के 'आपः' (ज्ञानप्रवाह) सुषुप्ति के लोक में लीन हो जाते हैं, हमें कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा होता, तब क्या यह यज्ञ भंग हो जाता है? नहीं, तब भी दो देव जागते हैं। ये दोनों देव कभी भी सोनेवाले नहीं, इन्हें कभी नींद दबा नहीं सकती, अतः ये 'सत्रसदौ' तब भी यज्ञ में बैठे हुए जागते रहते हैं। ये हैं– (1) आत्म–चैतन्य और (2) प्राण। इन सात ऋषियों को दर्शनशक्ति देनेवाला देव एक है और इन रक्षक प्राणों को प्राण–शक्ति देने वाला दूसरा है। ये दोनों देव–ज्ञानशक्ति और कर्मशक्ति के देव–तब भी जागते रहते हैं और ज्ञान तथा कर्म द्वारा चलनेवाले इस यज्ञ की इन दोनों शक्तियों को निरन्तर कायम रखते हैं, बल्कि पुष्ट करते रहते हैं। इस प्रकार यह यज्ञ चौबीसों घण्टे निरन्तर चलता है, सौ वर्ष तक चलता रहता है, जबतक जीवन है तबतक चलता रहता है।

परन्तु क्या हम इस शरीर–यज्ञशाला को यज्ञशाला की भाँति पवित्र रखते हैं? कहीं यज्ञ करनेवाले ये सात ऋषि ज्ञानक्रिया द्वारा भगवद्‌यजन करना छोड़कर अपने ऋषित्व से भ्रष्ट तो नहीं हो जाते?

शब्दार्थ– शरीर सप्त ऋषयः प्रतिहिताः– शरीर में सात ऋषि स्थापित हैं सप्त सदं अप्रमादं रक्षन्ति– सात हैं जो कि इस सद (स्थान, यज्ञशाला) की प्रमाद–रहित होकर रक्षा करते रहते हैं। स्वपतः सप्त आपः लोकं ईयुः –सुषुप्तावस्था में ये सात ज्ञानप्रवाह अपने लोक में लीन हो जाते हैं, तत्र च– तो वहाँ भी सत्रसदौ– यज्ञ में बैठे रहनेवाले अस्वप्रजौ– कभी न सोने वाले देवौ– दो देव जागृत– जागते रहते हैं।

पर्यावरण संरक्षण का एकमात्र साधन यज्ञ

—शिवदेव आर्य, गुरुकुल पौंधा, देहरादून

प्रकृति मनुष्य की जननी है। मनुष्य का हित प्रकृति के साथ समरस होने में है और सहजीवन करने में है। उच्छृंखल विज्ञान और हिंसक प्रौद्योगिकी के जरिये औद्योगिक मानव ने प्रकृति पर आधिपत्य जमाने की सोची। उसके विध्वंसक दुष्परिणाम आज सामने है। पर्यावरण में प्रदूषण का जहर घुलता जा रहा है। पारिस्थितिक असन्तुलन बढ़ रहा है और समस्त परिवेश दम घोट रहा है। महात्मा गांधी जी कहते हैं — यह प्रकृति अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध कराती है लेकिन हर व्यक्ति के लालच की पूर्ति नहीं कर सकती है।

पर्यावरण आज की जटिल एवं ज्वलन्त समस्या बना हुआ है। प्रतिवर्ष ५ जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। पर्यावरण सुरक्षा के लिए विश्वनीति जरूरी है। इसमें सन्देह नहीं है कि अलग—अलग कदम उठाकर विभिन्न देश सारी पृथ्वी के लिए विनाशकारी स्थिति पैदा कर सकते हैं। अतः हमें यह मानना चाहिए कि भले हम अलग—अलग देश के हों पृथ्वी केवल एक है। हमें केवल अपने लिए नहीं अपितु समस्त पृथ्वी के लिए उसको इकाई मानकर कुछ न कुछ कदम उठाना पड़ेगा। विश्व के जनक और पावन वेदों के ज्ञान दाता, परमात्मा ने सृष्टि रचना के साथ ही सृष्टि को पवित्र और शुद्ध रखने के लिए पवित्र वेदों द्वारा जो सैद्धान्तिक रूप में ज्ञान—विज्ञान दिया है। यदि उसका पालन हम करते तो संसार में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न न होती। संसार के नित्य कार्य मे प्रदूषण का उत्पन्न होना स्वाभाविक है जैसे हम शुद्ध श्वास लेते हैं और अशुद्धश्वास छोड़ते हैं। शुद्धजल, शुद्धभोजन खाते हैं और बदले में दुर्गन्धित मलमूत्र छोड़ते हैं जो पर्यावरण को दूषित करते हैं। आज जल, वायु, मिट्टी, अन्न कुछ भी शुद्ध नहीं है। प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि अमेरिका और कनाडा जैसे देशों में तेजाबी वर्षा एक प्रमुख समस्या है। समस्त संसार आज पर्यावरण प्रदूषण से चिन्तित है। अपने कर्तव्य का सुचारू रूप से पालन करती हुई प्रकृति वायु के शोधन में अवश्य महत्वूर्ण योगदान करती रही है अन्यथा अब तक वायुमण्डल इतना प्रदूषित हो गया होता कि श्वास लेना दूभर हो जाता। अग्निहोत्र उस महान् प्रभु द्वारा रचाए गए इस महान् प्राकृतिक यज्ञ का ही एक रूप है। इसके द्वारा वायु की दुर्गन्ध नष्ट होकर सुगन्ध फैलती है। वेद यज्ञ को वायु की शुद्धि का हेतु मानता है। ''वसो पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्रधारम्'' इसलिए शास्त्रकारों ने प्रतिदिन यज्ञ करने का विधान दिया है। मनु महाराज ने तो यज्ञ न करने वाले को दण्ड का भागी माना है। यजुर्वेद भी यज्ञ का त्याग न करने का आदेश देता है।

वसो पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो घर्मोऽसि विश्वधाऽसि।
परमेण धाम्ना दृँ्हस्व मा ह्वार्माते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत्।।

इस मन्त्र का अर्थ करते हुए ऋषि दयानन्द जी लिखते हैं — हे विद्यायुक्त मनुष्य। तू जो यज्ञ शुद्धि का हेतु है, जो विज्ञान के प्रकाश का हेतु है, और सूर्य की किरणों में स्थिर होने वाला है, जो वायु के साथ देश देशान्तर में फैलने वाला है जो वायु को शुद्ध करने वाला है, जो संसार का धारण करने वाला है, तथा जो उत्तम स्थान से सुख को बढ़ाने वाला है, उस यज्ञ का मत त्याग कर।

ऋषियों ने वेद मन्त्रों में छिपे इन गहन रहस्यों को समझा था। वे यज्ञों द्वारा राष्ट्र को स्वस्थ करते थे सम्भवतः यही कारण था कि यदि एक राष्ट्र ने दूसरे देश को हानि पहुंचानी होती थी तो वह उस देश के यज्ञों में विघ्न डालने का प्रयास किया करते थे। जैसा कि रामायणादि शास्त्रों में देखने को मिलता है। यज्ञ की व्यवस्था भंग हो जाने से अनावृष्टि तथा रोग फैल जाते थे। जिससे समस्त राष्ट्र दुःखी हो जाता था। इसीलिए ऋषियों के द्वारा रचाए गए यज्ञों की रक्षा करना राजा का मुख्य कर्त्तव्य समझा जाता था।

यज्ञ न केवल वायु की दुर्गन्ध को नष्ट करता है, अपितु इसे शुद्धकर रोगों से भी रक्षा करता है। महर्षि दयानन्द का यह विचार पूर्णतया सत्य है कि ''दुर्गन्ध युक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है। जब तक होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए। अतः समझना चाहिए कि प्राचीन आर्य लोग अग्निहोत्र के द्वारा वायु शुद्धि तथा आरोग्य प्राप्त किया करते थे। पर्यावरण सन्तुलन को कायम रखने का एक सबसे बढ़िया उपाय यह भी है कि प्रकृति में विभिन्न रूपों में विभिन्न अवस्थाओं में मौजूद वनस्पति क्षेत्रों और जीव जन्तुओं व पक्षियों की संख्या का संरक्षण किया जाए। पारिस्थितिकी सन्तुलन कायम रखने में जहाँ अन्य संघटकों का अपना स्थान है वहाँ पक्षियों का योगदान भी कम महत्वपूर्ण नहीं आंका गया है। विश्व में कभी पक्षियों की लाखों किस्में थी, जो इस शताब्दी के मध्य तक घटकर कुछ हजार रह गयी हैं।

अतः पर्यावरण के प्रदूषण को रोकने के लिए हमको संगठित होकर सार्थक कदम उठाने होंगे जिससे धरती पर मानव जीवन सुरक्षित रह सके।

अग्निहोत्र का दार्शनिक आधार

—कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अग्निहोत्र की परिभाषा है—'**अग्नये होत्रं हवनं यस्मिन् कर्मणि क्रियते तद्**' अर्थात् यह अग्निहोत्र अग्नि और होत्र का सम्मुच्चय है। सामान्य रूप से अग्नि में हवियों के समर्पण की प्रक्रिया अग्निहोत्र कहलाती है। तैत्तिरीय—संहिता में कहा गया है कि आत्मकल्याण के लिए जागरूक प्रत्येक व्यक्ति को देवऋण से उऋण होने के लिए यज्ञ करना चाहिए— **जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणै ऋणवान् जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यो प्रजया पितृभ्यः।** यज्ञों को हम दो श्रेणियों में रख सकते हैं— **(१) श्रौत यज्ञ**— इनके अन्तर्गत दर्शपौर्णमास, अग्निष्टोम, वाजपेय, अश्वमेध आदि प्रमुख हैं **(२) स्मार्त यज्ञ**— इनमें पंचयज्ञ प्रमुख हैं।

यजुर्वेद में पुरुष सूक्त का एक मंत्र है—

यत्पुरुषेण हविशा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः भाद्धवि।।
(यजु0 १८.६)

सृष्टि के आरम्भ में होने वाले पुरुष सूक्त में सृष्टि के प्रारम्भ में यज्ञ का चित्रण करते हुए कहा गया है कि प्रजापति ने वसन्त को आज्य, ग्रीष्म को समिधाएं ओर शरद को हवि बनाकर प्रस्तुत किया था। (ऋ0 १०.९०.६) इस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड का मूल उद्गम यज्ञ ही है। इसी सूक्त के एक अन्य मंत्र में यज्ञ की सात परिधियां और इक्कीस समिधाएं प्रतिपादित की गई हैं। यजुर्वेद के एक मंत्र में कहा गया है—

ऋतं च मेऽमृतं च मेऽयक्ष्मं च मेऽनामयच्च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मेऽनमित्रं च मेऽभयं च मे सुखं च मे भायनं च मे सूशाश्च मे सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पताम्।। (यजु0 १८.६)

इस मंत्र का भावार्थ यह है कि सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा के द्वारा वेद का ज्ञान प्रदान किया गया जिसमें निहित यज्ञविज्ञान में अनेक समस्याओं का निदान मिलता है। यज्ञ से सत्याचरण, नीरोगता, दीर्घजीवन, शत्रुत्व का अभाव, अभय, सुख, निद्रा, सुन्दर उषःकाल, दिन का शुभ आरम्भ प्राप्त होते हैं। प्रजापति ने स्वयं इस ब्रह्माण्ड को यज्ञ के द्वारा प्रादुर्भूत किया है। यज्ञ भौतिक होते हुए भी आध्यात्मिक है, यह न केवल सृष्टि विद्या के रहस्यों का प्रतिपादन करता है, अपितु वर्तमान मनुष्य जीवन की समस्याओं का युक्तिसङ्गत समाधान प्रस्तुत करता है। महर्षि दयानन्द ने अपने वेदभाष्य में तीन प्रकार के यज्ञ बताए हैं— १. अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधपर्यन्त, २. प्रकृति से लेकर पृथिवी पर्यन्त जगत् का रचनारूप यज्ञ और ३. सत्संग आदि विज्ञान से अध्यात्म एवं योगरूप यज्ञ।

यह वैज्ञानिक तथ्य है कि अग्नि में डाला गया पदार्थ नष्ट नहीं होता, अपितु वायु के सहयोग से सूक्ष्मातिसूक्ष्म बन कर ज्वालाओं के बीच से ऊपर उठ कर वायुमण्डल के सहयोग से आकाश में व्याप्त हो जाता है। अग्नि में डाला गया सुगन्धित द्रव्य, चारों ओर सुगन्ध फैलाते हुए, सब लोगों को सुख प्रदान करता है। महर्षि दयानन्द ने संस्कारविधि में होम के चार प्रकार के द्रव्य बताए हैं— प्रथम सुगन्धितकारक— इसमें कस्तूरी, केसर, अगर, तगर, श्वेतचन्दन, इलायची, जायफल, जावित्री आदि। द्वितीय पुष्टिकारक, इसमें घृत, दूध, फल, कन्द, अन्न, चावल, गेहूँ, उड़द आदि, तृतीय मिष्टकारक और चतुर्थ रोगनाशकसोमलता अर्थात् गिलोय आदि ओषधियां। वेदों में ऋतु के अनुकूल हविर्द्रव्यों का विधान मिलता है।

आध्यात्मिक अग्निहोत्र— प्राण ओर अपान अध्यात्म (= शरीर के देवता) कहे गए हैं। इनका

जन्म से लेकर मृत्यु तक अग्निहोत्र चलता रहता है। इस आध्यात्मिक अग्निहोत्र में कुशल व्यक्ति प्राणायाम की गति को अपने वश में करके प्राणायाम में अपने को कुशल करके प्राण में अपान और अपान में प्राण का होम करके अर्थात् प्राणायाम–परायण होकर समस्त इन्द्रियजन्य दोषों को नष्ट करके ब्रह्म प्राप्ति के मार्ग में अग्रसर होते हैं।

आधिदैविक अग्निहोत्र– इस सृष्टि में दिन और रात ही अग्निहोत्र का स्वरूप है। दिन का देवता सूर्य और रात्रि का देवता अग्नि है इन्हीं के सहारे चराचर जगत् दिन–रात कार्य करता है।

जीवन में यज्ञ की अनिवार्यता– वैदिक और लौकिक शास्त्रों में विकसित यज्ञों को ही श्रौत और स्मार्त यज्ञ कहा जाता है। श्रौतयज्ञ श्रुति अर्थात् वेद मंत्रों तथा स्मार्तयज्ञ गृह सूत्र आदि शास्त्रों पर आधारित हैं। श्रौतयज्ञों में दर्शपौणमास, अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम, वाजपेय, अश्वमेध आदि प्रमुख हैं। स्मार्तयज्ञों में पंचयज्ञ प्रमुख हैं। सामान्यतः हम यज्ञ को केवल एक कर्मकाण्ड समझते हैं। यह धारणा भ्रान्तिपूर्ण है, क्योंकि यज्ञ एक पवित्र धार्मिक कृत्य के साथ–साथ उत्कृष्ट जीवन दर्शन भी है। यह पवित्रता ओर परमार्थ का प्रतीक भी है। अग्नि स्वयं पवित्र होती है ओर अपने सम्पर्क में आने वाली वस्तुओं को पवित्र बना सकती है। अग्नि अपने लिए कुछ नहीं करती, इसके समस्त क्रिया कलाप परमार्थ के लिए होते हैं। अग्निहोत्र का वास्तविक स्वरूप त्याग, सेवा, सदाचार, परोपकार, उदारता और सहृदयता आदि को जीवन पद्धति में अपनाते हुए जीवन यज्ञ की आहुति में स्वयं को हवि के रूप में समर्पित करना है।

छान्दोग्य उपनिषद् के आधार पर यज्ञीय जीवन– छान्दोग्य **उपनिषद्** में मनुष्य के जीवन को एक यज्ञ माना गया है। उसकी आयु के प्रथम चौबीस वर्ष का प्रातःसवन है। गायत्री छन्द चौबीस अक्षरों वाला है। प्रातःसवन में गायत्री छन्द का ही प्रयोग होता है। इस यज्ञ के साथ वसु देवता का सम्बन्ध है। प्राण वसु कहलाते हैं। मनुष्य जीवन के अगले चवालीस वर्ष माध्यन्दिन–सवन का समय है। त्रिष्टुप् छन्द चवालीस अक्षरों का होता है। इस यज्ञ के साथ रुद्र देवता का सम्बन्ध है। रुद्र ही प्राण कहलाते हैं। मनुष्य जीवन के शेष अगले अड़तालीस वर्ष तृतीय–सवन है। जगती छन्द अड़तालीस अक्षरों का है। इसके साथ आदित्य नामक प्राण का सम्बन्ध है। आदित्य ही प्राण है। दार्शनिक महत्त्व का प्रश्न है कि जीवन व प्रकृति के बन्धन से मुक्त कैसे हों? मनुष्य से इतर योनियां केवल भोग योनियां हैं। केवल मनुष्य ही कर्म करके आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सकता है। मुक्ति के लिए पाप कर्मों का क्षय होना और पुण्य कर्म अर्जित करना आवश्यक है।

यज्ञीय अध्यात्म– यज्ञ की भावना मन ओर आचरण से की जानी चाहिए। इसमें **'इदं न मम'** का भाव सर्वोपरि होना अनिवार्य है। यज्ञ की एक परिभाषा में कहा गया है– **'इज्यन्ते सम्पूजिताः तृप्तिमासाद्यन्ते देवा अनेनेति यज्ञः'** अर्थात् जिस कार्य में देवगण पूजित होकर तृप्त हों, उसे यज्ञ कहते हैं। यज्ञ के बारे में कहा गया है– **'इज्यन्ते पूज्यन्ते देवा अनेनेति यज्ञः'** अर्थात् जिससे देवताओं की पूजा की जाये, उसे यज्ञ कहते हैं। यहां देवपूजन का भाव केवल देवगणों के पूजन से ही नहीं अपितु श्रेष्ठ व्यक्तित्व के धनी, ज्ञानी जनो व गुरु जनों के प्रति अपना सम्मान व्यक्त करना भी है। अग्निहोत्र के स्वरूप का विश्लेषण करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि यह कार्य व्यष्टि और समष्टि के लिए पवित्र ओर उपयोगी है। हम यज्ञ को जीवन में अपनाकर आध्यात्मिकता के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं।

सौजन्य से– APEX ENGINEERS
Gurgaon (Haryana), Mob. : 09810481720

अग्निहोत्र से अनेक लाभ व इसके कुछ पक्षों पर विचार

–मनमोहन कुमार आर्य

प्रतिदिन प्रातः व सायं अग्निहोत्र करने का विधान वेदों में है। वेद के इन मन्त्रों को महर्षि दयानन्द ने अपनी पंचमहायज्ञ विधि में प्रस्तुत किया है। महर्षि दयानन्द ने प्राचीन यज्ञ व अग्निहोत्र की परम्परा को पुनर्जीवित किया है। वेद के मन्त्र **'ओ३म् समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा।। इदमग्नये–इदन्न मम।।'** में कहा गया है कि जिस प्रकार विद्वान् लोग प्रेम और श्रद्धा से अतिथि की सेवा करते हैं, वैसे ही अन्यों को भी समिधाओं तथा घृतादि से व्यापनशील अग्नि का सेवन करना चाहिए। इसमें हवन करने योग्य अच्छे द्रव्यों की यथाविधि आहुति देने के आदेश दिए गए हैं। एक अन्य मन्त्र– **'सुसमिद्धाय शोचिशे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे–इदन्न मम।।'** में विधान है कि हे यज्ञकर्ता अग्नि में तपाये हुए शुद्ध घी की यज्ञ में आहुति दे, जिससे संसार का कल्याण हो। यह सुन्दर आहुति सम्पूर्ण पदार्थों में विद्यमान ज्ञानस्वरूप परमेश्वर के लिए है, यज्ञकर्ता के लिए नहीं है। अन्य अनेक मन्त्र हैं जो यज्ञ के प्रेरक व पोशक हैं तथा जिनका यथास्थान विधान यज्ञ की विधि में किया गया है। **वेद के विधान व शिक्षाओं का पालन करना मनुष्य का धर्म कहलाता है और न करना अधर्म है। धर्म सुख का व अधर्म दुःख का कारण है।** यह ध्यान रखना चाहिये कि मनुष्य के सभी कर्मों का फल साथ साथ नहीं मिलता। कुछ क्रियमाण कर्मों का फल मिल जाता है और कुछ कर्मों के फल संचित खातों में जमा हो जाते हैं जिनका फल कालान्तर व परजन्मों में मिलता है। ऋषियों ने स्वानुभूति के आधार पर घोषित किया है कि यज्ञ एक श्रेष्ठतम कर्म है। यज्ञ करने से अभीष्ट सुख की प्राप्ति होती है। निष्काम भावना से किए गये यज्ञ से भी मनुष्य को लाभ होता है। ऐसा साक्षात्कृतधर्मा ऋषि अर्थात् यज्ञ से सुख प्राप्ति का अनुभव किये हुए ऋषियों का कथन है। ऋषि ईश्वर का साक्षात्कार किये हुए वेदों के सत्य अर्थों के ज्ञानी व धर्म का आचरण करने वाले परोपकारी महात्माओं को कहते हैं। अतः इस प्रमाण के आधार पर संसार के सभी मनुष्यों को यज्ञ अवश्य करना चाहिये। इससे होने वाले सम्पूर्ण लाभों का तो पूर्ण ज्ञान अभी तक नहीं है, परन्तु जितना ज्ञान है उसके अनुसार यज्ञ का परिणाम इस जन्म व परजन्म में निश्चय ही कल्याणकारी व शुभ होता है।

यज्ञ करने के अनेक कारण व इससे प्राप्त होने वाले अनेक लाभ है जो विचार करने पर ज्ञात होते हैं। पहला कारण तो यह है कि हम जहां रहते हैं वहां हमारे मल मूत्र,

श्वास–प्रश्वास, भोजन निर्माण, वस्त्र प्रक्षालन आदि कार्यों से वायु, जल व पर्यावरण में अनेक विकार व प्रदूषण उत्पन्न होता है। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसे उपाय करें कि जिससे हमसे जितनी मात्रा में प्रदूषण हुआ है, उतना व उससे कुछ अधिक प्रदूषण निवारण का कार्य हो। इसका समाधान व उपाय यज्ञ वा अग्निहोत्र करने से होता है। प्रदूषण को दूर करने का अन्य कोई उपाय आज भी विज्ञान द्वारा सुलभ नहीं कराया गया है। यज्ञ के अन्तर्गत पहला कार्य तो यह है कि हम अपने निवास को अधिकतम हर प्रकार से स्वच्छ रखें। दूसरा यह है कि आम्र आदि प्रदूषण न करने वा न्यूनतम कार्बन–डाइ–आक्साईड उत्पन्न करने वाली पूर्णतया सूखी व छोटे आकार मे कटी हुई समिधाओं से यज्ञ कुण्ड में अग्नि को प्रदीप्त कर उस अग्नि के तीव्र व प्रचण्ड होने पर उसमें शुद्ध गो घृत सहित वायु, जल, पर्यावरण व स्वास्थ्य की पोषक व उसके अनुकूल सामग्री व पदार्थों की आहुतियां दी जायें। इसके लिए चार प्रकार की सामग्री का विधान किया गया है जिसमें मुख्य गोघृत है। अन्य पदार्थों में मिष्ट पदार्थ जिसमें शक्कर आदि सम्मिलित हैं। तीसरे वर्ग में सुगन्धित पदार्थ आते हैं जिसके अन्तर्गत केसर, कस्तूरी आदि पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। चतुर्थ प्रकार के पदार्थ आयुर्वेदिक ओषधियों सोमलता व गिलोय आदि सहित बादाम, काजू, नारियल, छुआरे, किशमिस आदि पोशक पदार्थ सम्मिलित हैं। इनका यज्ञ में आहुति हेतु विधान किया गया है। इन पदार्थों की अग्नि में आहुति देने से यह पदार्थ अतिसूक्ष्म होकर वायुमण्डल में फैल जाते हैं जिनसे वायुमण्डल की शुद्धि सहित वायुस्थ वाष्पीय जल की शुद्धि होती है जो बाद में वर्षा के होने पर खेत खलिहानों के अन्न को शुद्ध व पवित्र बनाते हैं। यज्ञ करते समय यज्ञकर्ता में धर्मभाव अर्थात् स्वहित–परहित दोनों व अहित किसी का नहीं, का भाव होता है। इससे ईश्वर यज्ञकर्ता के इस शुभ व पुण्य कार्य के लिए उसे सुख व आनन्द की अनुभूति कराने सहित अभीष्ट पदार्थों को उपलब्ध कराता है। आरोग्य व स्वास्थ्य लाभ तो यज्ञ का एक मुख्य गुण है। गोघृत के गुण तो सभी को ज्ञात हैं। गोघृत का सेवन करने से मनुष्य निरोग रहने के साथ बलिष्ठ होता है। ईश्वर की प्राप्ति से पूर्व यह स्वास्थ्य व बल ही मनुष्य के लिए अभीष्ट होता है जिसकी प्राप्ति गोघृत आदि के सेवन करने से होती है। यज्ञ में इसका प्रयोग करने से इसका सूक्ष्म रूप वायुमण्डल में विद्यमान रहता है जो न केवल यज्ञकर्ता अपितु यज्ञ स्थान के चारों दिशाओं में दूर दूर तक लोगों व प्राणियों को लाभान्वित करता है। यज्ञ में दी गई घृत व सभी पदार्थों की आहुतियां सूर्य की किरणों के साथ हल्की होने के कारण आकाश में काफी ऊंचाई तक जाती है जिससे वायु में जो सूक्ष्म जीव, बैक्टीरिया आदि होते हैं उनसे होने वाले दुष्प्रभाव से भी मनुष्य बचा रहता है।

यज्ञ में हमारे ऋषियों ने वेद मन्त्रोच्चार का विधान भी किया है। वेद मन्त्रों का उच्चारण होने से ईश्वर से सम्पर्क जुड़ता है व उससे मित्रता उत्पन्न होने के साथ वेद मन्त्रों के कण्ठ=स्मरण होने से उनकी रक्षा होती है और साथ ही मन्त्रों में निर्दिष्ट लाभों का ज्ञान भी होता है। इन मन्त्रों के प्रयोग व उनके अर्थों को पढ़ने से यज्ञकर्ता संस्कृतनिष्ठ शुद्ध हिन्दी बोल पाते हैं। इससे अनेक वैदिक शब्दों का ज्ञान, उनके प्रति प्रेम व उनके प्रयोग की भावना को बल भी मिलता है। हम अपने अनुभव से यह समझते हैं कि वेदमन्त्रों का उच्चारण करना मनुष्य के परमार्थ की दृष्टि से भी अधिक लाभप्रद है। दैनिक यज्ञ करने वाले लोग यज्ञ न

करने वाले परिवारों से अधिक स्वस्थ, निरोगी व दीघार्यु होते हैं ऐसा अनुमान व प्रत्यक्ष ज्ञान अध्ययन करने पर प्राप्त होता है। हमारा यह भी अनुभव है कि यज्ञ करने वाला व्यक्ति जीवन में अनेक छोटी–बड़ी दुर्घटनाओं के होने पर भी अनेक बार उसमें पूर्णतः सुरक्षित रहता है। यह वैदिक जीवन व्यतीत करने सहित यज्ञ करने का लाभ ही ज्ञात होता है। यह भी हमारा अनुभव है कि यज्ञ करने से मनुष्यों की बुद्धि सभी प्रकार के ज्ञान व विषयों को ग्रहण करने में तीव्रतम व महत् क्षमता वाली होती है तथा वह अपने जीवन का कोई भी लक्ष्य निर्धारित कर उसे प्राप्त कर सकता है।

यज्ञ के लाभ का एक उदाहरण प्रस्तुत कर इस लेख को विराम देंगे। आर्यसमाज में प्रभु आश्रित जी का यश व कीर्ति यज्ञों के प्रचारक के रूप में आज भी सर्वत्र विद्यमान है। उनके एक अनुगामी दम्पत्ति ऐसे थे जो उनके सत्संग में सम्मिलित होते थे परन्तु उनके पास धन का नितान्त अभाव था। वह उन दिनों यज्ञ करने के लिए घृत व सामग्री तक का व्यय करने में समर्थ नहीं थे। महात्मा जी के सामने उन्होंने यज्ञ करने की अपनी इच्छा व्यक्त की और धनाभाव की यथार्थ स्थिति भी उन्हें बताई। महात्मा जी ने उन्हें संकल्प लेकर यज्ञ करने का परामर्श दिया और कहा कि ईश्वर की कृपा से धीरे–धीरे सभी साधन प्राप्त हो जायेंगे। इस परिवार ने दैनिक यज्ञ आरम्भ कर दिया। शनैः शनैः इनकी आर्थिक, शारीरिक व सामाजिक उन्नति होती गई। आर्थिक उन्नति इतनी हुई कि इन्होंने जीवन में लाखों वा करोड़ों रूपये शुभ कार्यों के लिए दान दिये। आज भी इनके पुत्र प्रातः यज्ञ करते हैं। अनेक संस्थाओं के अधिकारी हैं। उनका यश सर्वत्र व्याप्त है तथा वह सुखी व सम्पन्न हैं। हमारी यदा–कदा उनसे भेंट होती रहती है। आपने पिछली एक भेंट में बताया कि जब 1947 में वैदिक राष्ट्र भारत का विभाजन हुआ तो लोग अपनी धन–सम्पत्ति लेकर पाकिस्तान से भारत आये थे परन्तु यह परिवार अपनी सारी सम्पत्ति वहीं छोड़कर केवल यज्ञ कुण्ड अपने गले में टांग कर व उसमें विद्यमान अग्नि को सुरक्षित रखते हुए भारत पहुंचा था। इस परिवार ने उस अग्नि की रक्षा करते हुए उसे बुझने नहीं दिया। विगत लगभग 75 वर्षों से यह यज्ञाग्नि निरन्तर प्रज्जवलित है। वर्तमान में श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री जी सपत्नपीक व परिवार सहित इस अग्नि में ही प्रातः यज्ञ करते हैं। ऐसे व्यक्ति, परिवार व उनसे जुड़े लोग धन्य हैं। हम तो इनके दर्शन कर ही स्वयं को कृतकृत्य मानते हैं। हमने अपने जीवन में भी यज्ञ के अनेक चमत्कार अनुभव किये हैं। यह सब ईश्वर सच्चे विचारों वाले अपने अनुयायियों को उनकी पात्रता व योग्यता के अनुसार प्रदान करता है। महर्षि दयानन्द ने पंचमहायज्ञ विधि और संस्कार विधि ग्रन्थों में पंच महायज्ञों का विधान किया है। इसे जान व समझकर सभी मनुष्यों को इसका सेवन कर लाभ उठाना चाहिये। इसको करने से यज्ञकर्ता को अवश्य लाभ मिलेगा, ऐसा हमें पूर्ण विश्वास है जिसका आधार हमारा अध्ययन, ज्ञान व अनुभव है। हमने यज्ञ का भौतिक व व्यवहारिक स्वरूप प्रस्तुत किया है।

सौजन्य से–
KUKREJA INSTITUTE OF HOTEL MANAGEMENT
DEHRADUN

यज्ञ और अग्निहोत्र के विषय में सामान्य विचार

—यज्ञ मीमांसा से साभार

'यज्ञ' शब्द देवपूजा, संगतिकरण और दान अर्थवाली यज धातु से नङ् प्रत्यय करके निष्पन होता है। जिस कर्म में परमेश्वर का पूजन, विद्वानों का सत्कार, संगतिकरण अर्थात मेल, और हवि आदि का दान किया जाता है, उसे यज्ञ कहते है।अग्नि और होत्र मिलकर 'अग्निहोत्र' शब्द बनता है। जिस कर्म में श्रद्धापूर्वक निर्धारित विधि के अनुसार मन्त्रपाठसहित अग्नि में आहुति दी जाती है, उसका नाम 'अग्निहोत्र' है।

अग्निहोत्र आवश्यक कर्त्तव्य

अग्निहोत्र वैदिक संस्कृति में प्रत्येक मनुष्य के लिए एक आवश्यक कर्तव्य है। शतपथ ब्राह्मण में एक कथा आती है—

'ब्रह्म ने सभी प्रजाओं को मृत्यु के लिये दे दिया, केवल ब्रह्मचारी को नहीं दिया। मृत्यु ब्रह्म से बोला कि ब्रह्माचारी में भी मेरा भाग होना चाहिए। ब्रह्म ने कहा कि जिस रात्रि ब्रह्मचारी अग्नि में समिधा न देगा, उस रात्रि उसमें तेरा भाग होगा। अतः जिस रात्रि ब्रह्मचारी समिधादान नहीं करता, उस रात्रि मृत्यु उसकी आयु से कुछ अंश ले लेता है। इस कथा से ब्राह्मणकार ने ब्रह्मचारी के लिए अग्निहोत्र की अनिवार्यता को ही बताया है। मनु ने भी ब्रह्मचारी के कर्त्तव्यों में अग्निहोत्र को ही विशेष स्थान दिया है। गृहस्थ आश्रम में पंच अग्निहोत्र भी है। वानप्रस्थाश्रम में भी अग्निहोत्र नहीं छूटता। सन्यास आश्रम में यद्यपि भौतिक अग्निहोत्र की अनिवार्यता नहीं रहती तथापि आत्मिक अग्निहोत्र सन्यासी को भी करना ही होता है।

शतपथ में लिखा है कि अग्निहोत्र 'जरामर्य सत्र' है, अर्थात् या तो शरीर के नितान्त जीर्ण और अशक्त हो जाने पर इससे छुटकारा मिलता है, या मृत्यु के उपरान्त। शतपथ में ही यह भी कहा है कि 'अन्य सब यज्ञ तो एक न एक दिन समाप्त हो जाते है, फिर उनकी कर्तव्यता नहीं रहती, किन्तु अग्निहोत्र कभी समाप्त नहीं होता। सायं अग्निहोत्र कर चुकने पर अग्निहोत्री की यह भावना होती है कि प्रातः फिर करूँगा, प्रातः अग्निहोत्र करके वह यह सोचता है है सायं फिर करूँगा। इस प्रकार जो अग्निहोत्र को अन्त न होनेवाला मानकर करता है, वह अनन्त श्री और प्रजा वाला हो जाता है। शतपथ के ही एक कथानक के अनुसार— 'प्रजापति ने प्रजाओं को उत्पन्न किया और अग्नि को भी। अग्नि उत्पन्न होते ही सबको जलाने लगी। यह देख सब उसे बुझाने लगे। तब वह पुरुष के पास आई और उसने यह समझौता किया कि मैं तुझी में प्रविष्ट हो जाती हूँ, तू मुझे उत्पन्न और धारण किया कर। जैसे तू इस लोक में मुझे उत्पन्न और धारण करेगा, वैसे ही मैं तुझे परलोक में उत्पन्न और धारण करूँगी। तदनुसार यजमान करता जब अग्न्याधान करता है, तब अग्नि को उत्पन्न और धारण करता है। अग्नि बदले में उसका परलोक सुधार देती है, अर्थात् उसे उच्च कुल में मनुष्य—योनि प्राप्त होती है, या वह मुक्त हो जाता है। इस कथानक में अग्निहोत्र को मनुष्य का आवश्यक कर्तव्य बताने के साथ—साथ अग्निहोत्र का फल भी बताया गया है।

वेदों के भी अनेक मन्त्र मनुष्य को अग्निहोत्र के लिए प्रेरित करते हुए अग्निहोत्र की आवश्यकर्तव्यता की ओर इंगित करते हैं, यथा—

स्वाहा यज्ञं कृणोतन।।
स्वाहापूर्वक यज्ञ करो।

यज्ञेन वर्धते जातवेदसम्।।
यज्ञ से अग्नि को बढ़ाओ

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।।
समिधा से अग्नि को पूजित करो, घृतों से उस अतिथि को जगाओ।

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन।।
सुप्रदीप्त अग्निज्वाला में तप्त घृत की आहुति दो।

अग्निमिधीत मर्त्यः।।
मनुष्य को चाहिए कि वह यज्ञाग्नि को प्रदीप्त करे।

सम्यञ्चो अग्नि सपर्यत।।
सब मनुष्य मिलकर अग्निहोत्र करो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते है— 'होम करना... अत्यावश्यक है। —— आर्यकर शिरोमणि महाशय ऋषि महर्षि, राजे —महाराजे लोग बहुत सा होम करते और कराते थे। जबतक होम करने का प्रचार रहा। तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था। अब भी प्रचार हो, तो वैसा हो जाय।

यज्ञ का रोगाणु-गणनांक पर प्रभाव

—डा० जगदीश प्रसाद

वायु में सर्वत्र प्रत्येक समय असंख्य रोगाणु विद्यमान रहते हैं, अपने अनुकूल परिस्थितियों में इनकी मात्रा में वृद्धि होती है जबकि विपरीत परिस्थितियों में इनकी मात्रा में ह्रास उत्पन्न होता है। यज्ञ की दृष्टि से इनका अध्ययन—अन्वेषण यद्यपि कई अन्वेषकों ने किया है तथापि यहाँ पर मात्र एक अन्वेषक के शोध—कार्य का संक्षेप में वर्णन किया जाता है।

बम्बई के जीवाणु—वैज्ञानिक श्री ए.जी. मोण्डकर ने, यज्ञ के वायुमण्डल का जीवाणु—संख्या पर क्या प्रभाव होता है, इसके लिए सन् 1982 में कुछ वैज्ञानिक प्रयोग किये। एक प्रयोग में, समान विस्तार के दो कमरों का चयन किया गया। प्रयोग के आधा घण्टा पूर्व, आधुनिक वैज्ञानिक विधियों द्वारा, इनकी रोगाणु—संख्या ज्ञात की गई। इनमें से प्रथम कमरे में, ठीक सूर्यास्त के समय अग्निहोत्र किया गया। दूसरे कमरे में, उन्हीं द्रव्यों से केवल अग्नि प्रज्वलित की गई किन्तु यज्ञ नहीं किया गया। इस प्रकार इन्हें दो—दो घंटों का उद्भासन (ऐक्सपोज़र) दिया गया। दोनों कमरों की रोगाणु—संख्या पुनः ज्ञात की गई। मोण्डकर ने देखा कि दूसरे कमरे की तुलना में, प्रथम कमरे की रोगाणु—संख्या में 19.4 प्रतिशत कमी आ गई है। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यज्ञ मात्र धूमन (फ़्युमिगेशन) की क्रिया नहीं है— इससे अधिक, कुछ और भी है, जो शोध का विषय है।

डॉ. मोण्डकर ने एक दूसरे प्रयोग में किसी रोगाणु— विशेष पर अग्निहोत्र के प्रभाव का अध्ययन किया। इसके लिए उन्होंने स्टैफ्रिलोकोकाई पायोजीन्स नामक रोगाणु को छाँटा। इस रोगाणु को ब्लड अगर की दो प्लेटों में प्रविष्ट किया। इनमें से प्रथम प्लेट को यज्ञ के वायुमण्डल में उद्भाषित करके, बारह घंटे तक वहीं रखकर छोड़ दिया। परीक्षण के पश्चात् उन्होंने देखा कि इस प्लेट के लगभग सभी जीवाणु निष्क्रिय हो चुके हैं— जीवाणु मर चुके हैं। इसकी पुष्टि करने के लिए उन्होंने प्रत्येक प्लेट के जीवाणुओं का, अलग—अलग, एक मिलीलीटर सामान्य (नॉर्मल) सोडियम क्लोराइड विलयन में पायस (इमल्शन) बनाया। उनकी आविलता (टर्बिडिटी) की तुलना करके, उनकी सान्द्रता समान कर ली गई। इन दोनों विलयनों को समान जाति के एक—एक चूहे (श्वेत मूषक) की जंघाओं में टीके (इनऑकुलेशन) द्वारा पहुँचाकर, उनका पाँच दिनों तक निरीक्षण किया गया। अग्निहोत्र से प्रभावित प्रथम प्लेट से प्राप्त विलयन से चूहे को एक विशेष प्रकार का फोड़ा बन गया। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यज्ञ के वायुमण्डल का रोगाणुओं को नष्ट करने में महत्वपूर्ण स्थान है।

एक अन्य प्रयोग में डॉ. मोण्डकर ने हवनकुण्ड से विभिन्न दूरियों पर (एक सौ साठ सेन्टीमीटर से दो सौ पच्चीस सेन्टीमीटर) के परास में रखे नमूनों पर यज्ञ

के प्रभावों का अध्ययन किया। इसके लिए, उन्होंने स्टेफ ऐल्बुस, बी सब्टिलिस ऐण्टेरोकोकाई, ई. कोलाई, स्टेफ़ पायो तथा डी पेनुमोनिई नामक रोगाणुओं का चयन किया। उन्होंने देखा कि यज्ञ के वायुमण्डल में रोगाणुओं की संख्या घटती है तथा उनकी हवनकुण्ड से दूरी बढ़ने के साथ, हवन का रोगाणु शामक प्रभाव कम होता जाता है ('यूऐस सत्संग', 10, 1, सितम्बर, 1982)।

इसी प्रकार का एक स्वतंत्र प्रयोग अन्वेषक डॉ. बी. आर. गुप्ता, ऐसोसिएट प्रोफ़ेसर, रोगाणु– विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र) ने किया। उन्होंने देखा कि जिस आवासीय कॉलोनी में यज्ञ नहीं होता है उसमें वायुमण्डलीय रोगाणु–गणनांक एक सौ तेईस था, जबकि जिस कॉलोनी में नियमित अग्निहोत्र होता रहता था उसका रोगाणु गणनांक मात्र पच्चीस था। स्पष्ट है कि यज्ञ से वायुमण्डलीय रोगाणु निष्क्रिय हो जाते हैं। इस प्रकार, वायु–प्रदूषण को दूर करने के लिए यज्ञ वज्र–रामबाण है। अथर्ववेद (10/5/43) ने इसीलिए कहा है कि प्रजापालक राजा उपद्रवियों को वश में रखे और उनको ऐसा नष्ट कर दे कि जैसे हवन में उत्तम सामग्री और काष्ठ आदि से रोगकारण दुर्गंध (रोगाणु) आदि नष्ट हो जाते है।"

एक प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. बी. वेंकटराव ने अपनी 'पंचतन्त्र' नामक पुस्तक में लिखा है कि "आधुनिक सभ्यता ने मनुष्य को प्रकृति से दूर कर दिया है। इसीलिए आधुनिक मनुष्य का प्राकृतिक विधियों से विश्वास उठ गया है। आज हम यह भी भूल गए हैं कि हमें ताजी वायु तथा सूर्य–प्रकाश में जीना है।"

इसी प्रकार, प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. हेनरी लिण्डलहर ने अपनी ख्यातिप्राप्त 'फ़िलॉसफ़ी ऐण्ड प्रैक्टिस ऑफ नेचर क्योर' नामक पुस्तक में 'स्वास्थ्य' तथा 'रोग' की व्याख्या करते हुए लिखा है कि "भौतिक, मानसिक तथा नैतिकता के स्तरों पर, मानव का निर्माण करने वाले तत्वों तथा शक्तियों के सामान्य तथा सामंजस्यपूर्ण कम्पन का नाम स्वास्थ्य है। इसके विपरीत, एक या अधिक स्तर पर, रोग है। दुर्घटना आदि के अतिरिक्त, प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन ही रोग का मुख्य कारण है।" डॉ. लिण्डलहर ने रोग को ठीक करने की जो रूपरेखा प्रस्तुत की है उसका सार है कि मनुष्य प्रकृति के अनुकूल चले।

यज्ञ करते समय शरीर के रन्ध्र खुल जाते हैं और अग्न्होत्र से उठनेवाली वाष्प चर्म में प्रविष्ट होने पर, रोगी, किसी चिकित्सक आदि पर आश्रित न होकर, अपनी चिकित्सा स्वयं करने लगता है।

इस प्रकार, प्राकृतिक चिकित्सा में यज्ञ का महत्वपूर्ण स्थान है। यज्ञ के बिना प्राकृतिक चिकित्सा अधूरी है। यही कारण है कि होमोथिरैपी आज प्राकृतिक चिकित्सा की एक अलग–स्वतंत्र चिकित्सा, पद्धति बन गई है।

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में अग्निहोत्र

—डॉ० रामप्रकाश शर्मा

महर्षि दयानन्द ऐसी सीमा रेखा हैं, जिनसे युग का निर्धारण होता है। दयानन्द से पूर्व यह देश न केवल दासता की गहन श्रृंखला में जकड़ा हुआ था, अपितु वह धर्म, समाज, यहाँ तक कि, अध्यात्म के क्षेत्र में भी उसका दृष्टिकोण प्रतिक्रियावादी था। उस युग में वेद के विषय में यह मान्यता थी कि वास्तविक वेद तो भस्मासुर ले गया है या फिर कुछ लोगों का मानना था कि वेद जर्मनी में हैं। जब वेद के विषय में, जो हमारे संस्कृति के प्राणस्वरूप हैं, यह मान्यता थी तब अग्निहोत्र किस प्रकार के होते होंगे, इसकी मात्र कल्पना की जा सकती है। वर्तमान में होने वाले अनेक यज्ञ ऐसे हैं, जिनको वेद की निकषा पर यज्ञ कहा ही नहीं जा सकता। कोई किसी देवी या देवता को लक्ष्य कर, विना मन्त्र के कुछ श्लोकों से, कभी–कभी तो रामचरितमानस की चौपाइयों से यज्ञ करते देखे जा सकते हैं। महर्षि दयानन्द ही वे व्यक्ति हैं जिन्होंने विश्व को वेद का मार्ग दिखाया और उसके आधार पर दैनिक पंञ्चमहायज्ञ का विधान करते हुए विश्व के समक्ष अग्निहोत्र का महत्त्व स्थापित किया।

महर्षि दयानन्द अग्निहोत्र की परिभाषा देते हुए कहते हैं:—**'अग्नये परमेश्वराय जलवायुशुद्धिकरणाय च, होत्रं हवनं दानं, यस्मिन् कर्मणि क्रियते तदग्निहोत्रम्'** जिस कर्म में अग्नि वा परमेश्वर के लिये, जल और पवन की शुद्धि या ईश्वर की आज्ञापालन के अर्थ, होत्र हवन अर्थात् दान करते हैं, उसे 'अग्निहोत्र' कहते हैं। उपयुक्त परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है कि अग्निहोत्र वह है जिसमें अग्नि और परमेश्वर के लिये आहुति दी जाती है। यहाँ महर्षि ने अग्निहोत्र का प्रथम प्रयोजन परमेश्वर की स्तुति और उपासना को माना है और अग्निहोत्र का दूसरा आनुषङ्गिक प्रयोजन जल और पवन की शुद्धि को बताया है। साथ ही यह कहा है कि अग्निहोत्र ईश्वर की आज्ञा पालन करने के लिये करना चाहिये।

उपयुक्त क्रम पर विचार करने पर मन में अनेक शंकायें उठना स्वाभाविक है। प्रथम शंका यह है कि अग्नि और परमेश्वर के लिये अग्निहोत्र क्यों किया जाये? इसका उत्तर ऋग्वेद के पुरुष सूक्त से प्राप्त हो जाता है। पुरूषसुक्त में परमात्मा को यज्ञरूप में चित्रित किया गया है।

जिस प्रकार सृष्टि की उत्पत्ति करने के लिये परमात्मा ने अग्निहोत्र किया, उसी प्रकार का आयोजन मनुष्य को भी करना चाहिये। परमात्मा का यज्ञ निष्कामभाव से किया गया है, उसी प्रकार मनुष्य को भी निष्कामभाव से यह यज्ञ करना चाहिये। इसका कारण पुरूषसूक्त में स्पष्ट करते हुए बताया गया है कि जो ऐसा करते हैं वे उसी प्रकार नाक (दुःखरहित लोक मोक्ष) को प्राप्त करते हैं, जिस प्रकार साध्य देवों ने प्राप्त किया है। अतः महर्षि दयानन्द उपयुक्त निर्देश के माध्यम से मनुष्य को पुरूषार्थ चतुष्टय के अन्तिम सोपान मोक्ष पर पहुँचने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

जीवन में विद्या और अविद्या दोनों का महत्वपूर्ण स्थान है। परमात्मा की प्राप्ति का प्रयास विद्या है, जबकि जीवन के लिये भौतिक सुख–सुविधाओं को प्राप्त करने का मार्ग अविद्या है। इनमें से किसी एक की भी उपेक्षा दुःख का कारण हो सकती है। अतः महर्षि दयानन्द परमेश्वर के लिये यज्ञ करने के साथ यह भी निर्देश देते हैं कि यह यज्ञ जल और पवन की शुद्धि करने के लिये भी किया जाना चाहिये। कहने का तात्पर्य यह है कि अग्निहोत्र से जल और वायु की शुद्धि होती है। महर्षि दयानन्द जिस युग में हुए थे, उस समय पर्यावरण–प्रदूषण कोई समस्या नहीं थी, लेकिन ऋषि की दृष्टि ने आने वाले संकट को पहिचानते हुए अग्निहोत्र को मनुष्य के लिये आवश्यक करणीय कर्तव्य बताया। जिस प्रकार शौचादि आवश्यक नैत्यिक कर्तव्य हैं, उसी प्रकार अग्निहोत्र भी आवश्यक करणीय कर्तव्य है। इसकी उपेक्षा

कितनी भयंकर हो सकती है, यह आज किसी के लिये भी रहस्य नहीं रह गया है। पर्यावरण–प्रदूषण के प्रभाव से महानगरों में रहने वालों का जीवन नरक हो रहा है। ये वस्तुतः महानगर न होकर महानरक ही हैं। समस्या इतनी गम्भीर हो चुकी है कि स्थिति को सुधारने के लिये उच्चतम न्यायालय को हस्तक्षेप करते हुए सरकारों को दिशा निर्देश देने पड़ रहे हैं। समाचार पत्रों में प्रायः यह पढ़ने को मिलता है कि प्रदूषण के प्रभाव से ताजमहल के पत्थर अपनी चमक खोते जा रहे हैं और उनकी आयु कम होने लगी है। जब पर्यावरण प्रदूषण के प्रभाव से पत्थर प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते, तब जीव जगत् की इससे कितनी हानि हो रही है, इसका अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है।

भोपाल गैस त्रासदी से हममें से कौन परिचित नहीं है। वहाँ गैस के प्रभाव से कुछ ही क्षणों में चार हजार लोग मृत्यु के ग्रास बन गये थे और उसके दंश से न जाने कितने आज भी भंयकर व्याधियों से ग्रस्त होकर मृत्यु का शिकार बन रहे हैं। जिस क्षेत्र में यह भयानक घटना घटित हुई, उसमें कुछ परिवार नित्य यज्ञ करने वाले थे, जिन पर इस विभीषिका का प्रभाव नहीं पड़ा। यह तथ्य इस बात को पुष्ट करने के लिये पर्याप्त है कि यज्ञ मनुष्य के लिये आवश्यक करणीय कर्तव्य है। एक बार यह सम्भव है कि हम बिना भोजन के जीवित रह लें और हमारा अस्तित्व भी बचा रह जाये, परन्तु आज जिस स्थान पर हम खड़े हुए हैं, वहाँ से साफ दिखायी दे रहा है कि अग्निहोत्र के अभाव में जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। तभी तो आज कहा जाने लगा है कि वन ही जीवन है। वह है तो प्राणवायु है और उस वन का भी आधार यज्ञ है। तभी तो आचार्य मनु कहते हैं कि अग्नि में दी गयी आहुतियाँ सूर्यमण्डल में पहुँचती हैं, उससे मेघ बनते हैं, मेघ से वर्षा और उससे अन्न उत्पन्न होता है। गीता में भगवान् कृष्ण यज्ञ विषयक सत्य का उद्घाटन करते हुए कहते हैं कि अन्न से भूत उत्पन्न होते हैं, वर्षा से अन्न होता है, यज्ञ से पर्जन्य होते हैं और श्रेष्ठ कर्मों से यज्ञ होता है। इस प्रकार जहाँ जीवन का आधार वन है, वहाँ उस वन की उत्पत्ति का कारण यज्ञ है।

सन् 1912 में 'इण्डियन रिव्यू' में हवन पर एक लेख निकला था, जिसमें प्रयोगों के आधार पर डॉ0 ट्रिलिट ने प्रतिपादित किया था 'कि चीड़ की लकड़ी के धुएँ से 32 प्रतिशत, शाहबलूत की लकड़ी से 35 प्रतिशत, शुद्ध खाण्ड के जलने से 70 प्रतिशत अंश में 'आल्डिहाइड' नामक गैस उत्पत्र होती है, यह गैस बहुत रोगनाशक होती है। इससे रोगियों के कमरे शुद्ध किये जाते हैं।

उपयुक्त वक्तव्य से यज्ञ की उपयोगिता विज्ञान के आधार पर सिद्ध होती हुई देखी जा सकती है। गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के पर्यावरण तथा सूक्ष्मजीवविज्ञान विभागों के विद्वान् प्रोफेसर भी इस दिशा में गम्भीर प्रयास कर रहे हैं। उनके प्रयासों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मधुमेह और यक्ष्मा जैसे घातक रोगों की चिकित्सा यज्ञ से सफलतापूर्वक की जा सकती है।

मेरी दृष्टि में ऐसा कोई दूसरा मार्ग नहीं है जिसमें विद्या और अविद्या, आध्यात्मिकता और भौतिकता, इहलोक और परलोक, सकाम और निष्काम दोनों मार्गों का समन्वय हो, जिसमें मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास निहित हो, जहाँ सृष्टि का प्रारम्भ और अन्त हो। अतः वेद यज्ञ को समस्त भुवन की नाभि घोषित करता है– 'अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः। इसी कारण शतपथ–ब्राह्मण यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म के रूप में प्रतिपादित करता है।

जो निष्काम भाव से निरन्तर अग्निहोत्र करता रहता है, एक दिन ऐसा आता है कि उसका जीवन ही यज्ञ बन जाता है। अथर्ववेद कहता है–

यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं च वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि।

इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा देवा यन्तु सुमनस्यमानाः।।

परमात्मा स्वयं यज्ञरूप हैं, उनका दिया यह जीवन भी एक यज्ञ है। उसमें जीवन के सर्वस्वभूत वाणी, श्रोत्रादि की आहुति देने वाले मानव का जीवन भी यज्ञमय हो जाता है। विश्वकर्मा प्रभु द्वारा रचित इस यज्ञ में समस्त देव शुभविचारों की आहुति प्रदान करें।

महर्षि दयानन्द और यज्ञ

–वेदरत्न डॉ० सत्यव्रत राजेश

अग्निहोत्र, जीवनोपयोगी तत्त्वों को वायुमण्डल में भरने की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। काठक शाखा में कहा है कि –मैं यज्ञ को ऐसे दुहता हूँ जैसे कोई उत्तम दूध देने वाली गाय को दुहता है।[1] जैसे गाय से हम पुष्ट, मिष्ट, सुगन्धित तथा रोगनाशक दूध चाहते हैं तो हमें गाय को ऐसे ही पदार्थ जो पुष्ट, मिष्ट, सुगन्धित तथा रोगनाशक हों देने होंगे। इसी प्रकार यदि हम वायुमण्डल से भी उपर्युक्त वातावरण चाहते हैं तो हमें उसमें पुष्टादि पदार्थ भरने होंगे। क्योंकि वायुमण्डल में रस या विष जो भी भरा जाएगा वहीं हमें लौटा देगा। उपर्युक्त तत्त्वों को वातावरण में कैसे भरा जाए, जब यह समस्या सम्मुख आती है तो हमारे मन में यह भी आ सकता है कि उपर्युक्त वस्तुओं को महीन पीस कर जल में मिलाकर अन्तरिक्ष में उसका छिड़काव कर दिया जाए। किन्तु इसमें दो समस्याएँ सामने आयेंगी। प्रथम तो किसमें इतनी सामर्थ्य है कि पूरे अन्तरिक्ष में उसे छिड़क सके। दूसरे अन्तरिक्ष का स्वभाव है कि वह सूक्ष्म वस्तु को तो धारण करता है, किन्तु स्थूल को नीचे फेंक देता है। जल जब तक वाष्प रूप में रहता है, तब तक अन्तरिक्ष उसे धारण करता है किन्तु स्थूल बूंद बनते ही उसे फेंक देता है। अतः हमारे द्वारा छिड़के जल को भी वह नीचे फेंक देगा तथा हमारा व्यय किया धन तथा पुरूषार्थ व्यर्थ जाएगा। इसके लिए हमें ऐसा उपाय करना होगा जो मिष्टादि पदार्थों को सूक्ष्म कर दे, जिससे वायुमण्डल उसे धारण कर सके।

वेद ने इसका उपाय बताते हुए एक मन्त्र में कहा है–समिधा से अग्नि को जलाओ, अतिथिवत् पूज्य इस अग्नि को घी से चेतन करो तथा इसमें हवि की आहुति दो। यह है वस्तुओं के सूक्ष्मीकरण का प्रकार। इस विषय में महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखते हैं–

प्रश्न–चन्दनादि घिस के किसी को लगावें वा घृतादि खाने को देवें तो बड़ा उपकार हो, अग्नि में डाल के व्यर्थ नष्ट करना बुद्धिमानों का काम नहीं।

उत्तर–जो तुम पदार्थविद्या जानते तो कभी ऐसी बात न कहते। क्योंकि किसी द्रव्य का अभाव नहीं होता। देखो, जहाँ होम होता है वहाँ से दूर देश में स्थित पुरूष के नासिका से सुगन्ध का ग्रहण होता है, वैसे दुर्गन्ध का भी। इतने से ही समझ लो कि अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म हो के वायु के साथ दूर देश में जा कर दुर्गन्ध की निवृत्ति करता है।

प्रश्न–जब ऐसा ही है तो केसर, कस्तूरी, सुगन्धित पुष्प और अतर (इत्र) आदि के घर में रखने से सुगन्धित वायु हो कर सुख कारक होगा।

उत्तर–उस सुगन्ध में वह सामर्थ्य नही है कि गृहस्थ वायु को बाहर निकाल कर शुद्ध वायु का प्रवेश करा सके। क्योंकि उसमें भेदक शक्ति नहीं है और अग्नि का सामर्थ्य है कि उस वायु और दुर्गन्धयुक्त पदार्थों को छिन्न–भिन्न और हल्का करके बाहर निकाल कर पवित्र वायु का प्रवेश करा देता है।

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में इस विषय पर

विशद विचार किया गया है। वहाँ भी यही प्रश्न किया गया है कि–सुगन्धयुक्त जो कस्तूरी आदि पदार्थ हैं, उनको अन्य द्रव्यों में मिला के अग्नि में डालने से उनका नाश हो जाता है, फिर यज्ञ से किसी प्रकार का उपकार नहीं हो सकता। किन्तु ऐसे उत्तम पदार्थ मनुष्यों को भोजनादि के लिए देने से होम से भी अधिक उपकार हो सकता है। फिर यज्ञ किस लिए करना है?

इसका उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द कहते हैं कि–**किसी पदार्थ का विनाश नहीं होता, केवल वियोगमात्र होता है।** आगे वे वस्तु ज्ञान के लिए प्रत्यक्षादि आठ प्रमाणों का उल्लेख करने के पश्चात् लिखते हैं "नाश को समझने के लिए यह दृष्टान्त है कि कोई मनुष्य मिट्‌टी के ढेले को पीस के वायु के बीच में बल से फैक दे, फिर जैसे वे छोटे छोटे कण आँख से नहीं दिखते, क्योंकि णश् धातु का अदर्शन ही अर्थ है। जब अणु अलग–अलग हो जाते हैं तब वे देखने में नहीं आते, इसी का नाम नाश है और जब परमाणु के संयोग से स्थूल द्रव्य अर्थात् बड़ा होता है तब देखने में आता है। और परमाणु उसको कहते हैं कि जिसका विभाग फिर कभी न हो सके। परन्तु यह बात केवल एकदेशी है, क्योंकि उसका भी ज्ञान से विभाग हो सकता है। जिसकी परिधि और व्यास बन सकता है उसका भी टुकड़ा हो सकता है। यहाँ तक कि जब पर्यन्त वह एकरस न हो जाय तब पर्यन्त ज्ञान से बराबर कटता ही चला जाएगा।

वैसे ही जो सुगन्ध आदि युक्त द्रव्य अग्नि में डाला जाता है, उसके अणु अलग–अलग हो के आकाश में रहते ही है, क्योंकि किसी द्रव्य का वस्तुता से अभाव नहीं होता। इससे वह द्रव्य दुर्गन्धादि दोषों का निवारण करने वाला अवश्य होता है। फिर उससे वायु और वृष्टिजल की शुद्धि के होने से जगत् का बड़ा उपकार और सुख अवश्य होता है इस कारण से यज्ञ को करना चाहिये।

घरों को अतर और पुष्पादि रख कर सुगन्धित करने के उत्तर में वे लिखते हैं–यह कार्य अन्य किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि अतर और पुष्पादि का सुगन्ध तो उसी दुर्गन्ध वायु में मिल के रहता है, उसको छेदन करके बाहर नहीं निकाल सकता और न वह ऊपर चढ़ सकता है, क्योंकि उसमें हल्कापन नहीं होता। उसके उसी अवकाश में रहने से बाहर का शुद्ध वायु उस ठिकाने में जा भी नहीं सकता। क्योंकि खाली जगह के विना दूसरे का प्रवेश नहीं हो सकता फिर सुगन्ध और दुर्गन्धयुक्त वायु के वहीं रहने से रोगनाशादि फल भी नहीं होते।

जब अग्नि उस वायु को वहाँ से हल्का करके निकाल देता है, तब वहाँ शुद्ध वायु भी प्रवेश कर सकता है। इस कारण यह फल यज्ञ से ही हो सकता है, अन्य प्रकार से नहीं क्योंकि जो होम के परमाणु युक्त वायु है, सो पूर्वस्थित दुर्गन्धवायु को निकाल के, उस देशस्य वायु को शुद्ध करके, रोगों का नाश करने वाला होता और मनुष्यादि सृष्टि को उत्तम सुख को प्राप्त कराता है।

जो वायु सुगन्ध्यादि द्रव्य के परमाणुओं से युक्त होम द्वारा आकाश में चढ़ के वृष्टिजल को शुद्ध कर देता और उससे वृष्टि भी अधिक होती है क्योंकि होम करके नीचे गर्मी अधिक होने से जल भी ऊपर अधिक चढ़ता है। शुद्ध जल और वायु के द्वारा अन्न और औषधि भी अत्यन्त शुद्ध होती है। ऐसे प्रतिदिन सुगन्ध के अधिक होने से जगत् में नित्य प्रति अधिक सुख बढ़ता है।

यह फल अग्नि में होम करने के बिना दूसरे प्रकार से होना असम्भव है। इससे होम करना अवश्य है और भी सुगन्ध के नाश नहीं होने में कारण है कि किसी पुरूष ने दूर देश में सुगन्ध चीजों का अग्नि में होम किया हो, उस सुगन्ध से युक्त जो वायु है सो होम के स्थान से दूर देश में स्थित हुए मनुष्य के नाक इन्द्रिय के साथ संयुक्त होने से उसको यह ज्ञान होता है कि यहाँ सुगन्ध वायु है। इससे जाना जाता है कि द्रव्य के अलग (विभक्त) होने में भी द्रव्य का गुण द्रव्य के साथ ही बना रहता है और वह वायु के साथ सुगन्ध और दुर्गन्धयुक्त सूक्ष्म होके जाता आता है। परन्तु जब वह द्रव्य दूर चला जाता है तब उसके नाक इन्द्रिय से संयोग भी छूट जाता है, फिर बालबुद्धि मनुष्य को ऐसा भ्रम होता है कि वह सुगन्धित द्रव्य नहीं रहा। परन्तु यह उनको अवश्य जानना चाहिये कि वह सुगन्ध द्रव्य आकाश में वायु के साथ बना ही रहता है। इससे अन्य भी होम करने के बहुत से उत्तम फल हैं। उनको बुद्धिमान लोग विचार से जान लेवें।

यह सब कुछ इतना स्पष्ट है कि इस विषय में कुछ भी कहने को स्थान नहीं रहता। मनु ने भी अग्नि में डाली आहुति के प्रसार का उल्लेख किया है।

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजा।।

अथार्त् अग्नि में अच्छी प्रकार डाली हुई आहुति आदित्य को प्राप्त होती है। आदित्य से वृष्टि होती है तथा उससे अन्नादि तथा प्रजाएँ उत्पन्न होती हैं।

यज्ञ का एक अन्य लाभ–

महर्षि दयानन्द ने यज्ञ से एक अन्य महत्त्वपूर्ण लाभ का भी उल्लेख किया है। वे लिखते है–सो उनकी (वायु तथा वृष्टि जल की) शुद्धि में दो प्रकार का प्रयत्न है–एक तो ईश्वर का किया हुआ और दूसरा जीव का। उनमें से ईश्वर का किया हुआ यह है कि उसने अग्नि रूप सूर्य और सुगन्ध रूप पुष्पादि पदार्थों को उत्पन्न किया है। वह सूर्य निरन्तर सब जगत् के रसों को पूर्वोक्त प्रकार से ऊपर खैंचता है और जो पुष्पादि का सुगन्ध है, वह भी दुर्गन्ध का निवारण करता रहता है। परन्तु वे परमाणु सुगन्ध और दुर्गन्धयुक्त होने से जल और वायु को भी मध्यम कर देते हैं। उस जल की वृष्टि से औषधि, अन्न, वीर्य और शरीरादि भी मध्यम गुण वाले होते हैं तथा उनके योग से बुद्धि, बल, पराक्रम, धैर्य और शूरवीरतादि गुण भी मध्यम ही होते हैं। क्योंकि जिसका जैसा कारण होता है, उसका वैसा ही कार्य होता है। यह दुर्गन्ध से वायु और जल का दोषपूर्ण होना सर्वत्र देखने में आता है। सो यह दोष ईश्वर की सृष्टि से नहीं किन्तु मनुष्यों ही की सृष्टि से होता है। इस कारण से उसका निवारण करना भी मनुष्यों को ही उचित है। जैसे ईश्वर ने सत्यभाषणादि धर्मव्यवहार करने की आज्ञा दी है, मिथ्याभाषण की नहीं, जो इस आज्ञा से उलटा काम करता है वह अत्यन्त पापी होता है और ईश्वर की न्याय व्यवस्था से उसको क्लेश भी होता है, वैसे ही ईश्वर ने मनुष्यों को यज्ञ करने की आज्ञा दी है, उसको जो नहीं करता वह भी पापी हो के दुःख का भागी होता है।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर महर्षि ने ध्यान दिलाया है जिसकी ओर न विश्व के धार्मिकों का ध्यान है, न दार्शनिकों का और न वैज्ञानिकों का। वह है यज्ञ के अभाव में बुद्धि, बल आदि का मध्यम होना, उत्तम न होना। जब बुद्धि आदि मध्यम होंगे तो उनसे चिन्तन आदि कार्य भी मध्यम होंगे और मानव उच्च तथा

उत्तम कार्य करने से वंचित रहेंगे। यज्ञ का यह लाभ संसार के लोगों के सामने लाने का प्रयत्न करना अपेक्षित है।

दूसरे उन्होंने यज्ञ न करने वालों को पापी बतलाया है। उसके लिए वे तर्क देते है—क्योंकि सबका उपकार करने वाले यज्ञ को नहीं करने से मनुष्यों को दोष लगता है। जहाँ जितने मनुष्यादि समुदाय अधिक होते हैं, वहाँ उतना ही दुर्गन्ध भी अधिक होता है। वह ईश्वर की सृष्टि से नहीं किन्तु मनुष्यादि प्राणियों के निमित्त से ही उत्पन्न होता है। क्योंकि हस्ती आदि के समुदायों को मनुष्य अपने ही सुख के लिए इकट्ठा करते हैं। इससे उन पशुओं से भी जो अधिक दुर्गन्ध उत्पन्न होता है सो मनुष्यों के ही सुख की इच्छा से होता है। इससे मनुष्यों के ही निमित्त से उत्पन्न होता है तो उसका निवारण करना भी उनको ही योग्य है क्योंकि जितने प्राणी देहधारी जगत् में हैं उनमें से मनुष्य ही उत्तम है। इससे वे ही उपकार और अनुपकार को जानने को योग्य हैं। मनन नाम विचार का है, जिसके होने से मनुष्य नाम होता है, अन्यथा नहीं। क्योंकि ईश्वर ने मनुष्य के शरीर में परमाणु आदि के संयोग विशेष इस प्रकार रचे हैं कि जिनसे उनको ज्ञान की उन्नति होती है। इसी कारण से धर्म का अनुष्ठान और अधर्म का त्याग करने को भी वे ही योग्य होते हैं, अन्य नहीं। इससे सबके उपकार के लिए यज्ञ का अनुष्ठान भी उन्हीं को करना उचित है।

महर्षि दयानन्द ने वैसे तो यज्ञ को पूर्णता प्रदान की है। उन्होंने यज्ञदेश, यज्ञशाला, यज्ञकुण्ड का परिमाण, यज्ञसमिधा, होम के चार प्रकार के द्रव्य, स्थालीपाक, चरू अर्थात् होम के लिए पाक बनाने की विधि, यज्ञपात्र, ऋत्विजों के लक्षण से लेकर यज्ञविधि आदि विषयों का संस्कारविधि आदि ग्रन्थों में समग्रता से उल्लेख किया है। यहाँ यज्ञ से तात्पर्य देवयज्ञ से ही है, अतः यहाँ उसी पर उनकी ही भाषा में विचार किया गया है। अन्यथा वे ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वयज्ञ एवं अतिथियज्ञ को तो महायज्ञों के अन्तर्गत मानते ही हैं, साथ ही उनकी दृष्टि में यज्ञ एक विस्तृतता को अपने अन्दर समाहित किए हुए है। मैं यजुर्वेदभाष्य 1. 2 के पदार्थ में उनका यज्ञ का अर्थ देकर इस लेख को विराम देता हूँ। वे लिखते हैं कि धातु के अर्थानुसार यज्ञ तीन प्रकार का है।

1– विद्या, ज्ञान तथा धर्म के अनुष्ठान में अधिक बढ़े हुए विद्वानों की लोक तथा परलोक के सुख सम्पादनार्थ सेवा तथा सत्कार करना।

2– अच्छे प्रकार पदार्थों के गुणों को जान कर उनके मेल से, गुणों के मेल विरोध का ज्ञान करके शिल्पविद्या का प्रत्यक्ष करना।

3– नित्य विद्वानों का संग एवं शुभविद्या, सुख तथा धर्मादि गुणों का दान करना।

इनके अतरिक्त अन्य अनेक अर्थ उन्होंने यज्ञ तथा उसके पर्यायवाची मख शब्द के किए हैं, उन्हें जानने के लिए लेखक की पुस्तक—**महर्षि दयानन्द के यजुर्वेदभाष्य में समाज का स्वरूप** का पच्चम अध्याय, करणीय यज्ञ एवं संस्कार देखें।

वस्तुतः महर्षि दयानन्द ने हमारे सम्मुख यज्ञ का वैज्ञानिक तथा लोक हितकारी विस्तृत रूप प्रस्तुत किया है जो प्रशंसनीय एवं ग्राह्य है।

With Best Compliments From :
KAMAL PLASTOMET
930/1, Behrampur Road, Village Khandsa, Gurgaon-122 001 (Haryana), Tel. : 0124-4034471, E-mail : krigurgaon@rediffmail.com

दयानन्द यजुर्भाष्य में यज्ञ का स्वरूप

डॉ वीरेन्द्र कुमार अलंकार

स्वामी दयानन्द सरस्वती अद्भुत प्रतिभा के धनी हैं। वेद हो या दर्शन, लोक हो या धर्म–सर्वत्र वे समन्वयात्मक दृष्टि रखते हैं। ऐसी दृष्टि जिसमें तर्क उपकारक है तथा अपने मन्तव्य के प्रति वे पूर्वाग्रहग्रस्त दिखाई नहीं देते, बल्कि वेद का प्रामाण्य उपस्थापित करते हैं। किन्तु वेद के नाम पर निरंकुशता से वे अत्यन्त व्यथित हैं। वे सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक सर्वग्राह्य समाधान खोजकर उसे एक सूत्रता में बाँधना चाहते थे। उनकी विश्वात्मक दृष्टि में प्राणिमात्र समाया हुआ है, पुनरपि वे विखण्डित भारत से अतीव क्षुब्ध दिखाई देते हैं। उनके निष्कर्ष केवल गम्भीर ही नहीं, असन्दिग्ध भी हैं। वे नमन के लिए एक शब्द, एक उपास्य, एक भाषा की प्रमुखता, एक सम्राट, एक मात्र वेद का ही सम्पूर्ण प्रामाण्य तथा एक ही उपासना पद्धति के पक्षधर थे। यह उपासना पद्धदि वैदिक परम्परा में 'यज्ञ' कहलाती है।

दयानन्द साहित्य में 'यज्ञ' एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। इसमें मनुष्य की प्रमुख प्रतिज्ञा है–इदं न मम। इस दृष्टि से जब कुछ भी आचरण किया जाता है, तब वह आचरण यज्ञ का रूप ले लेता है। इस दृष्टि से दयानन्द साहित्य में यज्ञ का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत एवं व्यापक है। यद्यपि वे वैदिक यज्ञ विधि के आचार्य हैं, किन्तु वे वैदिक यज्ञ की जिस स्तर पर व्याख्या करते हैं, वहाँ वह केवल ईश्वरोपासना न होकर सामाजिक अभ्युदय भी हो जाता है। इस प्रकार लोक तथा अध्यात्म का विलक्षण तारतम्य दयानन्दसाहित्य में उपलब्ध होता है।

प्रस्तुत लेख का आधार यजुर्वेद के यज्ञदेवताक मन्त्र[1] ही हैं। यजमान देवताक मन्त्रों का भी यथाशक्य उपयोग है। यद्यपि अन्यत्र भी यज्ञ सम्बन्धी प्रसङ्ग यजुर्भाष्य में भरे पड़े हैं, किन्तु अल्प–सामर्थ्यवशात् उनका यहाँ समावेश किंचिन्मात्र ही हो पाया है।

यजुर्भाष्य में यज्ञ शब्द का अर्थ है–विद्याज्ञानधर्मानुष्ठानवृद्धानां देवानां विदुषामैहिक पारमार्थिकसुखसम्पादनाय सत्करणं सम्यक् पदार्थगुणसंमेलविरोधज्ञानसंगत्या शिल्पविद्याप्रत्यक्षीकरणं नित्यं विद्वत्समागमानुष्ठानं, शुभविद्यासुखधर्मादिगुणानां नित्यं दानकरणमिति।

यजुर्वेद का विषय किसी यज्ञविशेष की विधि प्रदर्शित करना नहीं है। किन्तु यज्ञविषयक प्रसङ्ग अनेकत्र उपलब्ध हैं, जहाँ स्वामी जी ने यज्ञ के प्रयोजन, उद्देश्य और फल को इंगित किया है। यज्ञपरक इस विवेचन को निम्न शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है–

(क) यज्ञ का अर्थ और अभिप्रायः–

स्वामी जी ने कई स्थलों पर त्रिविध यज्ञ का उल्लेख किया है। इन स्थलों में त्रिविध का अभिप्राय देवपूजा, सङ्गतिकरण और दान प्रतीत होता है– **सर्वसुखोत्पादिकायै राजलक्ष्मै त्रिविधो यज्ञः।** देवपूजा से उनका अभिप्राय विद्या, ज्ञान, धर्म के अनुष्ठान में लगे विद्वानों का सत्कार है, संगति का भी अर्थ वे विज्ञानपरक करते हैं–पदार्थो के गुणों के मेल और विरोध के ज्ञान से शिल्पविद्या का प्रत्यक्षीकरण और दान का अर्थ है–शुभगुण, विद्या, धर्म और सत्य का नित्य दान करना। ध्यातव्य है कि दयानन्द भाष्य में देवताओं के त्रिविध रूप गृहीत होते हैं। आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक। वस्तुतः अग्नि में घी डाल देना यज्ञ नहीं है। **अग्निमीळे पुरोहितम्** में हवनकुण्ड की अग्नि

की उपासना ही अभिप्रेत नहीं है। एक साथ तीन यज्ञ यहाँ चलते है। एक भौतिक अग्नि की उपासना, किन्तु वहीं आत्मिक और पारमार्थिक अग्नि की प्रतीक भी है। इसलिए दूसरा यज्ञ आत्माग्नि को प्रज्वलित करना है तथा तीसरा यज्ञ ब्रह्म के साथ सम्पूर्ण तादात्म्य स्थापित करना है। इसके साथ ही अग्नि स्वरूप विद्वान् तथा प्रकाश स्वरूप ईश्वर की पूजा मनुष्यमात्र वा प्राणिमात्र के लिए दान करना भी है। इसी त्रिविध यज्ञ के नित्यानुष्ठान की चर्चा स्वामी जी करते हैं–त्रिविधो यज्ञो नित्यमनुष्ठेयः।

(ख) यज्ञसम्पादन एवं प्रक्रियाः–

यज्ञसम्पादन की प्रक्रिया का व्यवस्थित रूप निश्चयेन संस्कारविधि आदि में उपलब्ध है, पर कुछ संकेत यजुर्भाष्य में भी उपलब्ध हैं। यज्ञ की पहली व्यवस्था यह है कि वेदमंन्त्रों से ही यज्ञ होना चाहिए, इतना ही नहीं, वेद–मन्त्र के अर्थ के साथ भी सम्पूर्ण भावात्मक सामञ्जस्य होना चाहिए, तभी यज्ञ की अर्थवत्ता है। इस सामञ्जस्य के लिए यह भी आवश्यक है कि इस पृथिवी में वायु, जल तथा औषधियों को दूषित करने वाले दुर्गन्ध अपगुण तथा दुष्ट मनुष्यों का भी निवारण हो। यहाँ स्वामी जी ने स्पष्ट निर्देश किया है कि यज्ञीय सामग्री शुद्ध व रोगहारक होनी चाहिए। होमकर्त्ता एवं सामग्री दोनों में उत्तमता होनी चाहिए। उनका मानना है कि जो वेद आदि शास्त्रों के द्वारा यज्ञक्रिया और उसका फल जानके शुद्धि और उत्तमता के साथ यज्ञ करते हैं, तब वह सुगन्धि आदि पदार्थो के होम द्वारा परमाणु अर्थात् अति सूक्ष्म होकर वायु और वृष्टि जल में विस्तृत हुआ यज्ञीय पदार्थ सब पदार्थो को उत्तम करके दिव्य सुखों को उत्पन्न करता है।

स्वामी जी ने मनुष्यमात्र को यज्ञ करने का उपदेश किया है–**यज्ञसम्पादनाय ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य–शूद्राणां चतुर्विधा वेदाध्ययनसंस्कृता सुशिक्षिता वाग् गृह्यते।** वस्तुतः मनुष्य हो या राष्ट्रपुरूष–उसकी पूर्णता इन चार वर्णो के विना सम्भव ही नहीं है। यह चातुर्वर्ण्य संस्कृति ही मनुष्य को मनुष्य बनाती है। प्रत्येक मनुष्य में परात्पर तत्त्व के अन्वेषण की प्रवृत्ति उसका ब्राह्मणत्व है, असत्य के विरूद्ध लड़ने की प्रवृत्ति क्षत्रियत्व है। इन सभी के समन्वय में शरीर–यज्ञ की पूर्णता है। इसीलिए प्रत्येक यज्ञ में प्रत्येक मनुष्य की भूमिका भी स्वीकार्य है। तभी यज्ञकर्ता की सन्तानें शारीरिक, मानसिक और वाचिक रूप से निश्चल सुखवाली होंगी। इसलिए यज्ञ से भागना अपनी प्रजा (सन्तान) को सुख से विहीन करना है–**नैव केनापि मनुष्येण यज्ञसत्याचारविद्याग्रहणस्य सकाशाद् भेतव्यम्।** पत्नी की पूर्णता यज्ञ में है। स्वामी जी ने पत्नी शब्द का अर्थ यज्ञसहायक किया है।

(ग)यज्ञ के प्रयोजन तथा फलः–

यज्ञ किस प्रयोजन से किया जाए अथवा यज्ञ का फल क्या है–यह विचार दयानन्दभाष्य में केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से ही सुदृढ़ नहीं है। अमुक यज्ञ करके अमुक स्वर्गादि पारलौकिक फल का निर्देश स्वामी जी ने इन स्थलों में नहीं किया है। उनकी दृष्टि में यज्ञ का फल समस्त संसार में सुख की वृद्धि करना है–**अनुष्ठितोऽयं यज्ञो जगति रक्षाहेतुः।** यह यज्ञ वृष्टि का हेतु है। इसलिए ईश्वर मनुष्यों को आज्ञा देता है कि सुख देने योग्य घर को बना के वर्षा का हेतु यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए, क्योंकि यज्ञ से वायु और वृष्टिजल की शुद्धि होती है। वेदचतुष्टयी ईश्वर की वाणी है और उस वाणी का प्रत्यक्ष यज्ञ और पुरूषार्थ से ही सम्भव है। इस प्रकार स्वामी जी ने रोगनाश, जीवनधारण, बलप्राप्ति, शुभगुणों के धारण, पूर्ण आयुवर्धन, एवं अन्न–जल–वायु आदि शोधन को यज्ञ का प्रयोजन बताते हुए कहा है कि यज्ञकार्य से कभी भी भागना नहीं चाहिए।

वस्तुतः भौतिक अग्नि के संयोग से वह यज्ञ सूर्य की किरणों में स्थिर होता और पवन उसको धारण करता है, वह सर्वोपकारक होकर हजारों सुखों को प्राप्त कराके दुःखों का विनाश करने वाला होता है यज्ञ से आकाश और वायु की शुद्धि ही नहीं, बल्कि प्रकाश भी शुद्ध होता है यह विचारणीय व अनुसन्ध्येय प्रगङ्ग है। विद्या और भौतिक विज्ञान की सिद्धि भी यज्ञ से करणीय है। यज्ञ से शिल्पविद्या की उत्पत्ति की चर्चा स्वामी जी ने अनेकत्र की है। यह यज्ञ अपत्य और धन तथा उत्तम वीरों का योग कराने वाला है।

वस्तुतः स्वामी जी की दृढ़ धारणा थी कि यज्ञ के विना सुख–कल्पना व्यामोहमात्र है। यह यज्ञ मन्त्रोच्चारण मात्र नहीं है और न ही अग्नि में घृतादि आहुति डालना ही यज्ञ है। यज्ञ पहले अन्तस् में होना चाहिए। अन्धाधुन्ध आहुति डालना यज्ञ नहीं है। इसलिए वे स्थाने–स्थाने **'विद्याक्रियामययज्ञ'** कहते हैं। पूरे ज्ञान पूर्वक यह प्रक्रिया होनी चाहिए। तभी वह लौकिक विज्ञान भी यज्ञीय प्रक्रिया हो जाएगा और ऐसा विज्ञान किसी के लिए भी विनाशक नहीं होगा।

(घ) यज्ञ अर्थ का विस्तारः–

निःसन्देह दयानन्द से पूर्व यज्ञ के इतने पक्षों पर विचार सुदुर्लभ है। 'यज्ञ' अपने पारिभाषिक अर्थ अग्निहोत्रादि तक ही सीमित था। दयानन्द ने यज्ञ के जिस व्यापक स्वरूप पर उदारता से विचार किया है उससे सब कुछ ही यज्ञमय सा हो गया है। दयानन्द की यज्ञीय व्यवस्था ने ही यह सिद्ध किया कि– **'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म**' यज्ञवाची शब्दों के अर्थों का संकलन किया जाए और उनकी दयानन्दीय व्याख्या का अनुशीलन किया जाए, तो उससे पर्याप्त याज्ञिक स्वरूप स्पष्ट होने की सम्भावना है। दयानन्द का यजुर्भाष्य यह संकेत करता है कि समाष्टिभाव से किया जाने वाला कर्म यज्ञमय हो जाता है। इसलिए सम्पूर्ण सृष्टि ही यज्ञमय है। राजा का सुराज्य भी यज्ञ है। शिल्पविद्या भी यज्ञ है, स्वामी जी ने तो गृहस्थ जीवन को भी यज्ञ कहा है। ईश्वर, विद्वान् और ईश्वरराज्ञा की पालना भी यज्ञ है। इतना ही नहीं दुष्टों का विनाश भी यज्ञ है, इन्द्र–वृत्र का युद्ध भी यज्ञ है, यन्त्रविद्या भी यज्ञ है।

इस प्रकार स्वामी जी ने यज्ञ को एक संस्कृति, जीवन जीने की कला माना है। यज्ञ वेदी को आकाश किं वा ब्रह्माण्ड तथा यज्ञाहुति से उस ब्रह्माण्ड में होने वाले विज्ञान को भी स्वामी जी ने इङ्गित किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रह्माण्ड में होने वाली वैज्ञानिक प्रक्रिया का प्रतीक ही यह यज्ञ है। यज्ञकुण्ड की गम्भीरता कदाचित् भूगर्भ विद्या की भी सूचिका है।

'यज्ञ' के उपर्युक्त अर्थो का आधार खोजना कठिन कार्य भले ही हो, पर उन्हें नकारा भी नहीं जा सकता। इसमें तो निश्चय ही कोई सन्देह नहीं है कि दयानन्द ने जो यज्ञविषयक अर्थवाद पैदा किया है, उससे यज्ञीय अध्ययन में एक क्रान्ति ने जन्म लिया है। इस क्रान्ति में उनके प्रयास की सफलता को सहज ही देखा जा सकता है।

यजुर्वेद में उपलब्ध यज्ञपरक सभी सन्दर्भों का अध्ययन किया जाए तो वह विषय और अधिक व्यवस्थित होकर उभरेगा। 'यज्ञ' देवता अप्, सूर्य, अग्नि, सविता आदि देवताओं के साथ भी दिखाई देता है। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यज्ञ देवताक मन्त्रों के भाष्य में निम्न निष्कर्ष तो रेखांकित किए ही जा सकते हैं।

1. पाणिनीय धात्वर्थ को स्वीकार करके 'यज्ञ' शब्द में यज् धातु के अर्थ देवपूजा, संगति करण और दान अर्थ की समन्विति सर्वत्र विद्यमान है।
2. अग्निहोत्र आदि यज्ञों की स्थापना की गई है।

3. यज्ञीय अर्थ का विस्तार करके प्रत्येक कर्म को यज्ञमय करने का सन्देश है।

4. शिल्प, यन्त्र, भूगर्भ, वृष्टि–पत्रादि और अन्य अर्थ भी स्वामी जी ने गृहीत किए हैं।

5. अग्निहोत्रादि यज्ञ वेदमन्त्रों से ही सम्पादित होने चाहिएँ।

6. घृतादि सामग्री ही केवल शुद्ध नहीं होनी चाहिए, बल्कि सम्पूर्ण रूप से यजमान पवित्र होकर मन, वाणी और कर्म से यज्ञ करे।

7. यज्ञ केवल पारलौकिक सुख का ही साधन नहीं हैं, बल्कि ऐहलौकिक सुखों का मूल भी यज्ञ है।

8. याज्ञिक विधि में आध्यात्मिक, आधिभौतिक और पारमार्थिक–वे त्रिविध यज्ञ एक साथ होने चाहिए।

9. यज्ञ के प्रयोजन वा फल पूर्णायुष्य–प्राप्ति, बलवृद्धि, अन्न, जल, वायु, आकाश और प्रकाश की शुद्धता, रोगनाश तथा अन्य सभी लौकिक सुख–समृद्धि हैं।

10. यज्ञकुण्ड को खगोल और भूगर्भ स्वीकार करके आहुतियों से ब्रह्माण्ड की गति और प्रक्रिया का प्रतीक माना है।

11. उपर्युक्त सभी अर्थ परमसुख की ओर ले जाते हैं।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि स्वामी जी ने जो यज्ञ शब्द का अर्थ विस्तार किया है, उसका आधार यजुर्वेद में विभिन्न प्रसङ्गों में आए 'यज्ञ' शब्द ही प्रतीत होते हैं, तद्यथा–

यज्ञ यज्ञ गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा।

एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा।।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः इन दोनों मन्त्रों में क्या यज्ञ का एक ही अर्थ स्वीकार किया जा सकता है? इसी प्रकार **'यज्ञीयो गर्भः** यज्ञ के योग्य गर्भ' यहाँ यज्ञ शब्द अग्निहोत्रवाची नहीं है। इन प्रसङ्गनुरूप अर्थों को देखना ही दयानन्द का ऋषित्व है। इस प्रकार यज्ञ का व्यापक स्वरूप दयानन्द यजुर्भाष्य मे निरूपित हुआ है।।

तपोवन विद्या निकेतन नाला पानी, देहरादून के बच्चों को सम्मानित करते हुए
वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के पदाधिकारी

हवि एक अंक (ओंकार की प्राप्ति)- स्वाहा

–महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

(इस लेख में महात्मा जी द्वारा स्वाहा शब्द की व्याख्या की गई है। स्वाहाकार से मन का अहंकार दूर होता है, उसके निकट कोई पाप नहीं आ सकता और ऐसा व्यक्ति प्रभु का आज्ञा पालक बन जाता है जो बहुत बड़ी उपलब्धि है –संपादक)

भक्त– आपने एक बार कहा था कि जो उपस्थित सज्जन मन्त्र नहीं भी जानते उनको भी 'स्वाहा' शब्द गुँजाकर बोलना चाहिए। ऐसा करने का क्या लाभ है?

महात्मा–स्वाहा का वर्णन करने से प्रथम जरा "इदन्न मम" शब्द जिसका पीछे वर्णन किया है, इस समय उसके सम्बन्ध में कुछ और याद आ गया है, पहले सुन लीजिये–

यज्ञ (अग्नि) में पड़ी आहुति विभक्त हो जाती है। विभाग में जब सारे का सारा बाँट दिया जाए तो भागफल एक होता है, शेष शून्य रहता है, जैसे 3÷3=1, और घटाने में 3–3=0 सारे में से सारा ऋण करने से केवल शून्य रहता है।

भाग में यज्ञ के अन्त में जब स्वाहा कहकर "स्व" अपना "आहा" त्याग दिया जाता है और "इदन्न मम" अर्थात् अपना ममत्व भी शेष नहीं रहता, "इदमग्नये" अर्थात् वह प्रभु का हो जाता है, तो प्राप्त भी वही एक अग्निस्वरूप प्रभु होता है। शेष शून्य के समान प्रकृति दिखाई देती है। यदि वह शून्य (प्रकृति, माया) भी उठाकर एक के संग लगा दिया जाय अर्थात् उसे दक्षिणा में दे दिया जाय, तो वह शून्य भी (प्रकृति, माया) दस गुणा सामर्थ्यवाली हो जाती है, जैसे दस (10), अर्थात् वह यज्ञ करनेवाला अपना आत्मसमर्पण (स्वाहा) करता हुआ सब संसारी माया को शून्य समझे और उसे भी प्रभु–दक्षिणा में लगा दे, तो उसकी शक्ति दस गुणा हो जाएगी। लोग कहते हैं एक के साथ शून्य लग जाए तो एक की शक्ति दस गुणा हो जाती है। किन्तु नहीं, एक तो एक है ही। शून्य की कोई शक्ति अकेली नहीं। अब यदि 10 से 1 हटा दे तो शून्य की कोई कीमत नहीं रहती। हाँ, दक्षिण में आ जाने से, एक की शरण से दस गुणा अवश्य बन जाती है।

शब्द 'स्वाहा' का महत्व

1. यज्ञ में 'स्वाहा' का शब्द जोर से मिलकर उच्चारण करने और आकाश गुँजाने का एक फल यह भी है कि मनुष्य के हृदय व मस्तिष्क में प्रत्येक समय कुसंस्कारों की तरंगे उठती हैं, परन्तु जब मंत्रों की आहुति पर स्वाहा जोर से गुँजाया जाता है तो वह आवाज मस्तिष्क के अन्दर, एक लहर पैदा कर देती है। ऐसे ही वे शब्द आकाश में लहरें उत्पन्न करते हैं।

उस आवाज का काम यह है कि उठने वाले कुसंस्कारों की लहरों को वह आवाज काट डालती है और बाहर आकाश में अशुद्ध परमाणु जो मनुष्य के कुसंस्कारों का स्वागत करने के लिए दौड़ते हैं, वे शब्द उसे दूर–दूर भगा देते हैं।

संसार की हरेक वस्तु में उसकी सत्ता को प्रकट करने के लिए उसकी अपनी आत्मा होती है, जैसे सूर्य की आत्मा प्रकाश है। बिना प्रकाश के सूर्य नाम–रहित है और बिना प्रकाश दान करने से सूर्य निष्फल है, अतः प्रभु के सब देवता इसलिए देवता हैं कि वे अपनी–अपनी आत्मा को प्रभु की प्रजा के लिए त्याग कर रहे हैं। इस त्याग का नाम यज्ञ– परिभाषा में 'स्वाहा' कहलाता है, इसलिए प्रत्येक मंत्र के अन्त में 'स्वाहा' कहा जाता है। जब तक मन्त्र के शब्द पढ़े जाते हैं तब तक तो चरु आदि हाथ में बन्द होता है, परन्तु जब 'स्वाहा' का शब्द मुख से निकलता है तो वह वस्तु अग्नि की भेंट हो जाती है और उसी क्षण वह फैलकर लघु से महान् बन जाती है।

जब मनुष्य किसी दुःख में होता है तो उसका स्वरूप शब्द से प्रकट करता है, और जब वह खुशी की अवस्था में होता है तो 'अहा' कहता है किन्तु यह 'स्वाहा' शब्द निराला है! यह ऐसा अमोघ शस्त्र है कि इसको समझने से दुःख–सुख की सीमा से मनुष्य ऊपर उठ जाता है। मिलकर जोर से उच्चारण करने से जब आवाज़ आकाश में व्याप्त हो जाती है तो इसके पश्चात् आकाश में "आ" ही सुनाई देता है जो प्रभु का नाम है।

प्राण जब अन्दर लिया जाता है तो "स–स" की आवाज निकलती है, और जब बाहर निकलता है तब "हा–हा" की आवाज निकलती है। यह स्वाहा यज्ञ का प्राण है।

स्वाहा –अपना त्याग, अर्थात् मेरा –पन, किसी वस्तु और मेरे मध्य अहंकार ही स्वत्व को प्रकट करता है। जब मैं कहता हूँ कि यह मेरा मकान है तो यद्यपि मकान ईंटों का बना है, वे ईंटें पृथिवी से बनी हैं, वे मेरी नहीं, इसमें मेरा–पन अहंकार का कारण है। जब अहंकार का नाश हो गया, या इसको त्याग दिया, या समर्पण कर दिया तो यही आत्मसमर्पण है जो अहंकार का नाश करता है। उसके निकट कोई पाप नहीं आ सकता, वह प्रभु का यन्त्र बन जाता है।

सादर अनुरोध

तपोवन आश्रम के सदस्य बनें और आश्रम द्वारा किये जा रहे जनोपयोगी कार्यों में सहयोग प्रदान करें।

साधारण सदस्य रु 1200/– प्रति वर्ष	**सम्मानित सदस्य रु. 25000/– प्रति वर्ष**
सहायक सदस्य रु. 6000/– प्रति वर्ष	**विशिष्ट सम्मानित सदस्य रु. 50000/– प्रति वर्ष**
विशिष्ट सदस्य रु. 12000/– प्रति वर्ष	

तपोवन आश्रम का मेन गेट रात्रि 9 बजे बंद कर दिया जाता है यदि आप रात्रि 9 बजे के बाद आश्रम में निवास हेतु आ रहे हैं तो कृपया आश्रम के कर्मचारी श्री प्रकाश–8954361107 अथवा श्री जगमोहन–7830798919 पर पूर्व में ही सूचित कर दें ताकि आपके आवास एवं भोजन की उचित व्यवस्था की जा सके।

अधिक जानकारी के लिए आश्रम के सचिव से दूरभाष नं० 9412051586 पर वार्ता करें।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून द्वारा मई 2016 में पवमान पत्रिका विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है जिसके लिए विज्ञापनों की आवश्यकता है। आपसे विनम्र निवेदन है कि इस पुनीत कार्य में सहयोग देने की कृपा करें। विज्ञापन के रेट निम्नलिखित हैं।

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000
3.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000

शक्तिहीनता

छोटी हरड़ काया कल्प करने वाली रसायन

एक सन्त के 92 वर्ष की अवस्था में दाँत चमक रहे थे। उन्होंने अपने यौवन का रहस्य बताते हुए कहा था– "वे हर समय छोटी हरड़ (काली, जंगी, जव हरड़) को मुंह में रखकर चूसते रहते थे और नरम हो जाने पर उसे चबा जाते थे।" इससे उन्हें कभी पेट में गैस, सिरदर्द, अनिद्रा, जुकाम आदि का कष्ट जीवन में कभी नहीं हुआ।"

अनुभव–डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने लोक–कल्याणार्थ लिखा है। छोटी हरड़ को चूसने मात्र से अनगिणत लाभ होते हैं।

विशेष–जो व्यक्ति बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू की आदत छोड़ना चाहते हों और यह आदत न छूट रही हो तो उसके लिए एक आसान उपाय यह है कि पंसारी से छोटी हरड़ खरीदकर प्रत्येक हरड़ के छोटे–छोटे टुकड़े कर लें। फिर जब भी बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू का नशा करने की इच्छा या तलब लगे तभी एक टुकड़ा छोटी हरड़ का मुंह में डालकर चूसने लग जायें। कुछ ही दिनों में इन बुरी आदतों से सदा–सदा के लिए छुटकारा मिल जाएगा।

सावधानी–चौबीस घंटे लगातार हरड़ मुंह में न रखें, इससे मुंह के तालु की क्षति पहुंचने की संभावना हो सकती है। केवल खाने के पश्चात् दोनो समय छोटी हरड़ का टुकड़ा या हरड़ को स्वतः गलने तक मुंह में रखकर चूसते रहने से भी आजीवन स्वस्थ रहा जा सकता है बशर्ते वह आपको अनुकूल आए। 'अति सर्वत्र वर्जयेत'– इस बात का सदैव ध्यान रखें।

अति का भला न बोलना, अति की भली न चुप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।।

हरीतकी रसायन

इन्दौर के आयुर्वेद चक्रवती पं0 रामनारायण शास्त्री का खोजपूर्ण और अनूभूत योग इस प्रकार है–

(१) छोटी हरड़, ८ भाग (२) सैंधा नमक, १ भाग (३) चीनी, १ भाग (४) सोठ, १ भाग (५) पीपर छोटी, १ भाग – इन सबको अलग–अलग पीसकर मिला लें। फिर (६) गुड़, २ भाग मिलाकर (७) शहद, अन्दाज से जितना मिलाने से अवलेह (चाटने योग्य) वन जाये– इन सातों औषधियों को अच्छी तरह मिलाकर अवलेह बना लें। इस अवलेह को रात्रि सोते समय एक से दो चम्मच थोड़े कुनकुने जल या दूध के साथ कुछ लम्बे समय तक धैर्यपूर्वक इस अवलेह का निरन्तर सेवन करें। पेट के विविध रोग, जीर्ण प्रवाहिका, श्वास, कास, दुष्ट प्रतिश्याय, विविध वात रोग तथा वे सभी पुरानी व्याधियां, जिनसे पीड़ित रोगी विविध औषधियां लेते थक गये हैं, सभी में अमृततुल्य लाभप्रद है।

सावधानी– यद्यपि अनेक बार मलभेद के रोगियों को इस रसायन से मल बंध जाता है, तथापि पतले दस्त के रोगी इसका प्रयोग न करें। यह कायाकल्प के समकक्ष चमत्कारी योग है।

त्रिफला अवलेह

३ ग्राम त्रिफला (आंवला, हरड़, बहेड़ा–तीनों समभाग) चूर्ण में १ ग्राम तिल का तेल और ६ ग्राम शहद मिलाकर रोजाना खाली पेट प्रातः सायं चाटे तो पेट और धातु के समस्त रोग दूर होकर काया पलट जाती है। ऋषियों ने कहां तक कहा है कि एक मास निरन्तर प्रातः सायं इसका प्रयोग रोगी को नीरोग, बूढ़े को युवा और नार्मद को मर्द बना देता है। इसके सेवन करने से शरीर की कान्ति बढ़ती है तथा बवासीर, गर्मी, सुजाक, दाद, खांसी, दमा, बुखार, मर्दाना कमजोरी आदि कई बीमारियां जड़ से नष्ट हो जाती है। महिलाओं की मासिक धर्म की सारी खराबियां और श्वेतप्रदर आदि बीमारियां दूर हो जाती हैं और शरीर में नूतन शक्ति का संचार होने लगता है। जो व्यक्ति

प्रतिदिन त्रिफला–चूर्ण अनुकूल विधि से सेवन करता है, वह कभी बीमार नहीं पड़ता।

त्रिफला की चाय का काढ़ा– त्रिफला की चाय का काढ़ा (देखें, स्वदेशी चिकित्सा सार) का निरन्तर सेवन भी विविध रोगों को लम्बे समय से भोग रहे और हताश रोगियों के लिए सम्पूर्ण लाभ के लिए कायाकल्प के समकक्ष प्रयोग है।

आंवला अवलेह– उपरोक्त त्रिफला–अवलेह के योग में अनुपात में मिलाकर उसी तरह सेवन करने से भी प्रायः समान लाभ मिल जाते है, खासकर पित्त–प्रकृति के रोगियों को।

आंवला स्वरस और शहद– आंवलों का रस (दो चम्मच तथा शहद (दो चम्मच) समभाग सेवनीय प्रयोग (देखें, स्वदेशी चिकित्सा सार) भी कायाकल्प के समान नवजीवन–प्रदाता योग है। इसके स्थान पर आंवलों का चूर्ण और पिसी हुई मिश्री समभाग मिलाकर भी सेवन किया जा सकता है।

सदैव युवा रखने वाला सदाबहार चूर्ण

(१)सूखा आंवला का चूर्ण (२) काले तिल (साफ किए हुए) का चूर्ण (३) भृंगराज (भांगरा) का चूर्ण (४) गोखरू का चूर्ण–प्रत्येक का १00–१00 ग्राम चूर्ण लेकर मिला लें फिर उसमें ४00 ग्राम पिसी हुई मिश्री मिला लें। तत्पश्चात् उसमें १00 ग्राम शुद्ध देशी गोघृत और २00 ग्राम शहद मिलाकर किसी घी के चिकने मिट्ठी के पात्र या कांच या चीनी के बर्तन में रख लें। फिर चूर्ण में से एक चम्मच की मात्रा में खाली पेट नित्य प्रातः सायं निरन्तर तीन महीने तक प्रयोग करें।

विशेष– यह योग पूजनीय पागल बाबाजी का गुप्त योग है जो उन्नाव के डा. राजेन्द्र प्रसाद साहू द्वारा अनुभूत है और उन्होंने इसे आयुर्वेद की निस्वार्थ सेवा के लिए प्रकाशित किया है। उनके अनुसार इस प्रयोग से पूर्ण शरीर का कायाकल्प हो जाता है। यदि छोटी आयु में बाल झड़ गए हों तो पुनः उग आते हैं और समय से पहले बाल सफेद हो गए हो तो बाल काले आने शुरू हो जाते है। वृद्धास्था तक बाल काले बने रहते हैं। इसके प्रयोग से ढीले दांत मजबूत होते हैं और वृद्धावस्था तक ठीक रहते हैं। चेहरे पर कान्ति झलकने लगती है। शरीर शक्तिशाली एवं बाजीकरण युक्त हो जाता है तथा कुछ ही दिनों में दुर्बल व्यक्ति भी अपना वजन पूरा कर लेता है।

परहेज– अण्डा, मांस, मछली, नशीले पदार्थो का सेवन एवं वीर्य–नाश वर्जित है।

वर की आवश्यकता

धीमान जाति की तलाकशुदा, निसंतान आयु 37 वर्ष, हाईट 5′–3″ सरकारी सेवारत शिक्षिका के लिए योग्य वर चाहिए। जाति बन्धन नहीं।

वधु की आवश्यकता

धीमान जाति के बैंक में उच्च पद पर कार्यरत सॉफ्टवेयर इंजीनियर आयु 34 वर्ष हाईट 5′–7″ आय 18 लाख प्रतिवर्ष हेतु सुयोग्य वधु की आवश्यकता है। जाति बन्धन नहीं।

सम्पर्क सूत्र : 9458902524

औषधि-विज्ञान में यज्ञ का प्रयोग

—डॉ० जगदीश प्रसाद

पाश्चात्य औषधि–विज्ञान ने गत अर्द्ध–शताब्दि में जो उल्लेखनीय उन्नति व विकास किया है, उससे भ्रमित होकर कुछ तथाकथित बुद्धिवादी यह गर्वोक्ति करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं कि "आधुनिक औषधि–विज्ञान के बलबूते पर सब कुछ करना सम्भव है।" किन्तु, वे भूल जाते हैं कि आज का विज्ञान अनेक प्रश्नों के उत्तर देने में असमर्थ है– उसी के द्वारा उत्पन्न की गई अनेकानेक समस्याओं का हल प्रस्तुत करने में आधुनिक भौतिक विज्ञान मूक है या पंगु है। उदाहरणार्थ– संश्लेषित (ऐलोपैथिक) औषधियों के पार्श्व–प्रभाव (साइड इफ़ेक्ट्स) व पश्च–प्रभाव (आफ़्टर इफ़ेक्ट्स), परमावश्यक औषधियों के प्रति मानव शरीर का प्रतिरोध, औषधियों के अस्वाभाविक प्रभाव तथा आधुनिक सभ्यता के द्वारा प्रदत्त पर्यावरण–प्रदूषण का अभिशाप आदि हैं। इस प्रकार की समस्याओं का समाधान ढूँढने के लिए पाश्चात्य जगत् के औषधि–विशेषज्ञों ने 'मेडिसिना आल्टरनेरिया' (औषधियों का विकल्प) नाम से गोष्ठियाँ आरम्भ कर दी हैं। सन्तोष का विषय है कि इन गोष्ठियों में कुछ भारतीय तथा विदेशी महानुभावों ने यज्ञ के सर्वांगी उपयोगी गुण की ओर संकेत करके, उसे व्यवहार में अपनाने पर बल दिया है। पर्यावरण–प्रदूषण आदि की समस्या के समाधान के लिए जिनेवा में जून 1984 में संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वाधान में एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकारी, विश्व के अनेक लब्ध प्रतिष्ठ पत्रकार, अध्यापक, संस्थानों के निदेशक, समन्वयकारी तथा कुछ चयनित विशेषज्ञों ने भाग लिया था। इस संगोष्ठी की 'रिपोर्ट' एक पुस्तकाकार में प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक का नाम है 'होमा– थिरैपी'। इसके लेखक हैं यज्ञ के वैश्विक प्रचारक, भारत के सन्त श्री वसन्तवी परांजपे, संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तराष्ट्रीय युवा वर्ष, 1984 की जेनेवा बैठक के उपलक्ष्य में 'ट्री प्रोजेक्ट' के अन्तर्गत यह प्रकाशित हुई है।

मुम्बई के जीवाणु– विशेषज्ञ डॉ. ए.जी. मोण्डकर ने यज्ञ के पश्चात् यज्ञ–कुण्ड में बची ठण्डी राख के रोगहर के रूप में प्रभाव का अध्ययन किया। खरगोशों में हुई छूत की एक बीमारी– खुजली को ठीक करने के लिए प्रायः बेन्ज़ाइल बेन्ज़ोएट या सैलिसिलिक अम्ल को प्रयुक्त किया जाता है, जिससे खरगोश की खुजली ठीक होने में छः से आठ दिन तक लगते हैं। डाफ. मोण्डकर ने खुजली के रोगी खरगोशों पर यज्ञ की राख का गोघृत में बना मल्हम लगाने पर देखा कि वे केवल तीन दिन में ही ठीक हो गए। ('यूएस सत्संग', 1 120, 1982)। इससे स्पष्ट है कि यज्ञ न केवल वायुमण्डलीय जीवाणुओं को नष्ट करता और श्वास द्वारा रक्त में मिलकर शरीर को निरोगी बनाता है, प्रत्युत इसकी राख में भी प्रतिरोधी (ऐण्टीसेप्टिक) गुण होने से रोगाणुनाशक गुण है, जिससे जख्म आदि को ठीक किया जा सकता है।

मर्यादापालक कैसा हो

—दयानन्द दृष्टान्त मणिका से साभार

बलवनिन्द्रिया ग्रामः विद्वांसमपि कर्षति— इन्द्रियों का उठता हुआ वेग तूफान से भी ज्यादा ताकतवर होता है, बड़े—बड़े विद्वान् भी इन्द्रियों के विषयों में आसक्त होकर मार्गभ्रष्ट हो जाते हैं। इसलिये ब्रह्मचारी तथा सन्यासियों का स्त्रियों का एकान्तदर्शन संभाषण आदि मनु महाराज ने निषेध किया है। मर्यादा से रहकर ही मनुष्य सत्पथ का पथिक बनता है।

एक बार की बात है कि कुछ महिलाएँ इकट्ठी होकर स्वामी दयानन्द जी के पास आई। स्वामी दयानन्द ने उनसे पूछा माताओं कहाँ से आई हो? उन महिलाओं ने स्वामी दयानन्द के प्रश्न का उत्तर दिया कि हम साधुओं के दर्शन करके आई हैं।

स्वामी दयानन्द ने पुन' प्रश्न किया पूजनीया माताओं यहाँ आप किसलिये आई हो? उन महिलाओं ने उत्तर दिया कि यदि आप आदेश (अनुमति) देंगे तो आपके पास ठहरेंगी।

प्रत्युत्तर में जब स्वामी जी ने शब्द बाण दागा कि किसलिये? तब महिलाओं ने उत्तर में कहा कि उपदेश के लिए।

महिलाओं का यह उत्तर सुनकर ऋषिवर दयानन्द ने कहा कि यदि आपको सदुपदेश की अभिलाषा है तो आप अपने पति महोदयों को हमारे समीप (पास) भेजिये, हम उन्हें सदुपदेश (सद् शिक्षा) देंगे, हमारे द्वारा सदुपदेश ग्रहण करके वे आपको उपदेश देंगे, हम अकेली स्त्रियों को उपदेश नहीं देते हैं।

स्वामी दयानन्द के बेवाक स्पष्ट उत्तर को सुनकर वे महिलाएँ लौट गई तथा दोबारा नहीं आई।

शिक्षा— i. शास्त्र द्वारा निर्दिष्ट मर्यादा का ऋषि दयानन्द कितनी तत्परता और दृढ़ता से पालन करते थे। काश! यदि धर्म के ठेकेदारों एवं मठाधिकारियों ने इस मर्यादा का तनिक भी पालन किया होता तो अपनी तीर्थ यात्राओं तथा धार्मिक स्थल की यात्राओं में जो घिनौना दृश्य हमारे गुरुवर ऋषि दयानन्द तथा उनके शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द आदि ने देखा वे देखने को नहीं मिलते। अपितु एक आदर्श श्रेणी में मठ मन्दिर होते।

ii. जैसे नदियाँ तथा नहरें अपने तटों के अन्दर बहती हुई सिंचाई, पीने तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। परन्तु ये नदियाँ तथा नहरें तटों को तोड़कर (उल्लंघन करके) बहती हुई भयावह दृश्य उपस्थित करती हैं। यही मर्यादापालन का नियम ब्रह्मचारी, गृहस्थी तथा संन्यासी के लिए उपयोगी है।

पुरोहितों की आवश्यकता

देहरादून जनपद की निम्न आर्य समाजों के लिए व्यवहार कुशल, मृदुभाषी पुरोहित की आवश्यकता है। निःशुल्क आवास व्यवस्था के साथ मानदेय कर्मकाण्डीय योग्यता व अनुभवानुसार देय होगा।

आर्य समाज का नाम	**सम्पर्क सूत्र एवं मोबाईल नम्बर**
आर्य समाज मसूरी	श्री नरेन्द्र साहनी, 9837056165
आर्य समाज चकराता	श्री एस.एस. वर्मा, 9410950159
आर्य समाज धर्मपुर	श्री शत्रुघ्न कुमार मौर्या, 9412938663

अहंकार विजयी कौन

—दयानन्द दृष्टान्त मणिका से साभार

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनाद्धर्मः ततः सुखम् ।।

विद्या पढ़ने नम्रता से आती है, नम्रता से योग्यता आती है, योग्यता से धनप्राप्ति में सहायता होती है। पुष्कल धन प्राप्त होने पर धर्मसम्बन्धी कार्य किये जाते हैं, धर्म के पालन से सुख मिलता है।

एक बार की बात है कि सांवले रंग के दो तपस्वी युवक स्वामी दयानन्द से मिलने के लिए आये। स्वामी दयानन्द ने आदरपूर्वक उन दोनों युवकों को बैठाया। उन दोनों युवकों ने स्वामी दयानन्द के साथ योग विषयक संस्कृत भाषा में ही वार्तालाप किया, क्योंकि उनको अपने संस्कृत ज्ञान तथा यौगिक क्रिया पर बहुत अभिमान था। इस विषय में अपना बड़प्पन दिखाने के लिए वे स्वामी दयानन्द के पास मिलने के बहाने आये थे।

कुछ समय तक योगविषयक चर्चा करके वे दोनों युवक यह कहकर चलने को तैयार हो गये कि ऋषिवर् हम पूर्णतृप्त तथा पूर्ण प्रशान्त हैं।

युवकद्वय के मुख से पूर्ण शब्द सुनकर हँसते हुए ऋषि दयानन्द ने कहा कि हे महात्माओ् अभी भी आप दोनों में अहंकार की भावना शेष है, इसलिये पूर्णतृप्ति और पूर्णशान्ति नहीं है। परन्तु दोनों तपस्वियों ने स्वामी जी की बात का निराकरण करते हुए कहा कि हममें अहंकार नहीं है, हमने अहंकार को जीत लिया है।

स्वामी दयानन्द अनुपम पारखी थे इसलिए उन दोनों युवकों के घर निकलने पर तत्काल ही स्वामी दयानन्द के संकेत से किसी एक ब्रह्मचारी ने उनके साथ झगड़ना शुरू कर दिया। यह झगड़ा इतना अधिक बढ़ गया कि ब्रह्मचारी तथा दोनों तपस्वी हाथापाई करते हुए एक–दूसरे के बालों को पकड़कर आपस में एक –दूसरे से भिड़कर शरीर से लड़ते हुए परस्पर जमीन पर एक दूसरे को गिराने को तैयार हो गये।

लड़ाई के शोर को सुनकर स्वामी जी तथा अन्य जन अन्दर से बाहर आ गये तथा लड़ाई करने वाले उन तीनों को छुड़ाया। इसके बाद स्वामी दयानन्द ने उन दोनों युवकों को अन्दर ले जाकर समझाया कि मैंने पहले ही कहा था कि अभी तुम्हारा अहंकार शेष है, परन्तु तुम नहीं माने, अब परीक्षण से यह स्पष्ट हो गया कि अभी भी तुम दोनों में अहंकार शेष है। पूर्ण शान्त आपका अहंकार नहीं हुआ है। साधुओं को, विशेषकर प्रशिक्षुओं को अभिमान का सर्वथा त्यागकर देना चाहिए। परीक्षा में असफल होने पर दोनो तपस्वी क्षमा मांगते हुए नमो नारायण शब्द बोलकर स्वामी दशनन्द का अभिवादन करके वहाँ से चले गये। स्वामी जी के व्यवहार से वे दोनों युवक अत्यधिक प्रभावित हुए तथा इस घटना के बाद भी दो बार स्वामी जी के दर्शन के लिए आये।

शिक्षा—

1. भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः जैसे हम देखते हैं कि फल और पत्तों के बिना ठूँठ सीधा खड़ा रहता है परन्तु फल, फूल तथा पत्ते आने पर वे ही वृक्ष झुक जाते हैं, ठीक इसी प्रकार गुणग्राही, प्रशिक्षु जनों को नम्र तथा अहंकाररहित होना चाहिए।

2. शिक्षा स्वाध्याय से नहीं व्यवहारकाल से पूर्ण होती है।

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

रायपुर रोड (नालापानी), देहरादून–248008, दूरभाष : 0135–2787001

युवाओं हेतु
दिव्य जीवन निर्माण शिविर (आवासीय)

युवति वर्ग– 30 मई सांयकाल से 3 जून 2016 प्रातः काल तक

युवक वर्ग– 9 जून सांयकाल से 13 जून 2016 प्रातः काल तक

आयु सीमा– 15 वर्ष से 32 वर्ष तक

स्थान– वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, नालापानी देहरादून

शिविर निर्देशक–आचार्य आशीष जी तपोवन आश्रम तथा सहयोगी शिक्षक वर्ग

विषय– 1. Study Skills

2. पूर्ण व्यक्तित्व विकास, (Total personality development)
3. स्मरण शक्ति तीव्र करने के उपाय, मनोनियंन्त्रण,
4. सुखी जीवन के टिप्स, ध्यान (मेडीटेशन), आत्म सुरक्षा के उपाय (मार्शल आर्ट्स) एंव
5. वैदिक सार्वजनीन सत्यसिद्धान्तों का परिचय, प्रश्नोत्तर एवं वीडियों शो आदि।

भाषा–हिन्दी एवं अंग्रेजी

नियम–1. शिविर मे पूर्ण काल अनुशासित रहना अनिवार्य है।

2. प्रतिभागी की जिम्मेदारी माता पिता अथवा प्रेरक की होगी एवं उनकी लिखित स्वीकृति भी जमा करनी होगी।

शिविर शुल्क– इस ईश्वरीय कार्य में प्रत्येक प्रतिभागी एवं अभिभावक द्वारा भावना पूर्वक स्वैच्छिक सहयोग करना अनिवार्य है।

शिविर में स्थान सीमित होने के कारण अपना स्थान यथाशीघ्र निम्नलिखित महानुभावों से सम्पर्क कर सुरक्षित करा लेवें।

1. श्री यश वर्मा जी, यमुनानगर मो. 09416446305 (समय प्रातः 8 से रात्रि 10 बजे तक)
2. श्रीमती शालिनी शाह जी देहरादून मो. 8979753228 (समय दोपहरः 12 से सांय 07 बजे तक)
3. आचार्य आशीष जी देहरादून मो. 09410506701 (समय रात्रिः 8 बजे से 9.15 बजे तक)

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री	**ई. प्रेम प्रकाश शर्मा**	**संतोष रहेजा**
अध्यक्ष–09710033799	सचिव–09412051586	उपाध्यक्षा–09910720157

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ओ३म् सर्वेभवन्तु सुखिनः

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, वैदिक विरक्त मण्डल, आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तराखण्ड एवं आर्य उपप्रतिनिधि सभा हरिद्वार तथा आर्य उपप्रतिनिधि सभा देहरादून के संयुक्त तत्वावधान मे

अर्धकुम्भ मेला हरिद्वार 2016

स्वामी आर्यवेश

के शुभ अवसर पर

विशाल वेद प्रचार शिविर

स्थान : गौरी शंकर द्वीप (चण्डी घाट) प्लाट नम्बर 18–20

दिनांक : रविवार 20 मार्च से बुधवार 13 अप्रैल 2016 तक प्रतिदिन

योग साधना एवं ब्रह्मयज्ञ	प्रातः 5.30 बजे से 7.00 बजे तक	यज्ञ एवं संध्या	सांय 4.00 बजे से 6.00 तक
चतुर्वेद परायण यज्ञ	प्रातः 8.00 बजे से 10.00 बजे तक	भजन, प्रवचन एवं शंका समाधान	सांय 8.00 बजे 9.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	प्रातः 10 .00 बजे से 12.00 बजे तक		

विशेष आकर्षण

रविवार 20 मार्च 2016 को प्रातः 11.00 बजे	:	वेद प्रचार शिविर का शुभारम्भ–ध्वजारोहण
रविवार, 3 अप्रैल 2016 को प्रातः 10.30 बजे से	:	शोभा यात्रा एवं नगर कीर्तन
बुधवार, 13 अप्रैल 2016	:	समापन समारोह

इस अवसर पर आर्य समाज के सन्यासियों, आर्य मनीषियों एवं भजनोपदेशकों द्वारा वेद प्रचार, पाखण्ड खण्डन, गौहत्या, नशाखोरी, कन्याभ्रूण हत्या, अन्ध विश्वास एवं युवक–युवतियों मे तेजी से फैल रही अश्लीलता आदि विषयों पर विचार गोष्ठियों एवं प्रश्नोत्तर के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये जायेंगे।

आपसे विनम्र अनुरोध है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा कुंभ मेले के अवसर पर फहराई गई पाखण्ड खण्डनी पताका के गौरवपूर्ण इतिहास को पुनर्स्थापित करने के लिये आप अपने परिवार जनों एवं ईष्ट मित्रों के साथ भारी संख्या मे अर्द्धकुभ मेले में आर्य समाज द्वारा आयोजित वेद प्रचार शिविर मे अवश्य पधारें, और चतुर्वेद परायण यज्ञ में यज्ञमान बनें। इस पुनीत कार्य मे सभी बन्धुओं से अपेक्षा की जाती है कि वह तन, मन, धन से सहयोग देकर इस कार्यक्रम को सफल बनायेंगे। आप अपनी दान राशि क्रास चैक/ड्राफ्ट द्वारा आर्य उपप्रतिनिधि सभा हरिद्वार के नाम से डॉ. वीरेन्द्र पंवार, आर्यसमाज श्रवण नाथ निकट ललतारोह पुल, हरिद्वार के पते पर भेज सकते हैं अथवा आर्यउपप्रतिनिधि सभा हरिद्वार के पंजाब नेशनल बैंक आर्यनगर ज्वालापुर हरिद्वार अकाउन्ट नं–1064000101229341 में जमा करा सकते हैं। यज्ञमान बनने के लिए डा. विरेन्द्र पंवार (8958468764) अथवा श्री दिनेश कुमार आर्य मो. (9690907252) से सम्पर्क करके अपना नाम लिखा सकते है। यह भी निवेदन है कि महायज्ञ हेतु हवन सामग्री, गौघृत, एवं ऋषिलंगर के लिए आटा, दाल, चावल, सब्जी, घी, तेल, गुड़, चीनी आदि खाद्य सामग्री देकर पुण्य के भागी बनें।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले दानदाताओं की सूची

क्र.स.	नाम	धनराशि
1.	श्री ज्ञान भिक्षु वानप्रस्थी, नई दिल्ली	7500
2.	आर्य समाज प्रेमनगर, देहरादून	500
3.	आर्य समाज सुभाषनगर, देहरादून	500
4.	श्री चन्द्रगुप्त विक्रम, देहरादून	21000
5.	डॉ० निर्माला शर्मा, देहरादून	500
6.	श्री पी०डी० गुप्ता, देहरादून	500
7.	श्री ओमपाल सिंह, देहरादून	500
8.	सुश्री रेनू शाह, देहरादून	2000
9.	श्रीमती संगीता, देहरादून	500
10.	श्री संजय चौहान, देहरादून	500
11.	श्री लक्ष्मण प्रसाद आर्य, लखनऊ	1001
12.	श्री लक्ष्मीनारायण, मुम्बई	1200
13.	श्री राजाराम नागर, रुद्रपुर	1000
14.	श्री रामभज मदान, नई दिल्ली	100000
15.	श्री सोम देव, तपोवन आश्रम	1000
16.	श्री राजकुमार भण्डारी, देहरादून	2300
17.	माता स्वदेश धवन, तपोवन आश्रम	1100
18.	श्री चत्तर सिंह, देहरादून	2100
19.	श्री संदीप पाहवा, दिल्ली	2600
20.	श्री देव पाहवा, दिल्ली	500
21.	सेवा भारती, दिल्ली	500
22.	श्री इन्द्रजीत आर्य, कालावाली	1000
23.	श्रीमती कैलाश मारवाह, दिल्ली	1100
24.	श्रीमती रमा गुप्ता, दिल्ली	1000
25.	श्री देवेन्द्र कुमार नेगी, मण्डी	1000
26.	श्री लक्ष्मीनारायण आर्य, जोधपुर	1000
27.	कुमारी निधि विकास बतरा, कैथल	1100
28.	माता सुरेन्द्र अरोड़ा, देहरादून	10000
29.	श्री अश्विन बब्बर, मुंबई	1500
30.	कर्नल गणेश सिंह पोखरियाल, डोईवाला	1200
31.	स्व. श्रीमती अनिता बंसल, देहरादून	500
32.	श्री अशोक कुमार आर्य, औरैया	500
33.	श्रीमती शालिनी जी, देहरादून	501
34.	श्रीमती सुन्दर शान्ता चड्ढा, दिल्ली	50000
35.	श्री कृष्ण लाल गुलाटी, अहमदाबाद	1000
36.	श्री अशोक कुमार, कानपुर	500
37.	माता संतोष रहेजा, दिल्ली	10000
38.	श्रीमती सरला देवी, दिल्ली	500
39.	श्री रमन आमला, दिल्ली	10000
40.	श्री राज कवन जी, फरीदाबाद	1000
41.	श्रीमती निर्मल डालरा, फरीदाबाद	510
42.	श्रीमती ज्ञान देवी गुप्ता, फरीदाबाद	500
43.	श्रीमती कमला गुप्ता, फरीदाबाद	500
44.	श्रीमती उषा कपूर, फरीदाबाद	500
45.	श्री आनन्द स्वरूप चावला, फरीदाबाद	500
46.	श्रीमती तनु वर्मा, फरीदाबाद	5100
47.	श्रीमती हिमानी मित्तल, फरीदाबाद	500
48.	श्रीमती संतोष जसुजा, फरीदाबाद	1100
49.	श्री आई.जे. गिरधर, फरीदाबाद	1100
50.	श्रीमती मीनू चोपड़ा, दिल्ली	1100
51.	श्रीमती सत्या राजपाल, दिल्ली	2100
52.	श्री धर्मचन्द बत्रा, दिल्ली	1000
53.	श्री बलदेव राज आर्य, करनाल	500
54.	श्री नन्दकिशोर अरोड़ा, दिल्ली	40000
55.	श्री जे.के. गुप्ता, देहरादून	500
56.	श्री सुभाष चन्द, आस्ट्रेलिया	5000
57.	श्रीमती आरती एवं श्री सुनील पाण्डिया, अफ्रीका	5010
58.	श्री विजय एवं श्यामा भारद्वाज यू.एस.ए.	250 पॉण्ड
59.	श्री ज्ञानचन्द अरोड़ा, दिल्ली	1050
60	श्रीमती शशि आनन्द, यू.एस.ए.	10000
61.	श्री सुनील एलावादि, फरीदाबाद	2000
62.	श्री जे.एस. सामन्त, नैनीताल	1100

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

De Bono

Saturn Series

CPU Holder

Slide out Keyboard tray

Swivel and Tiltable keyboard tray

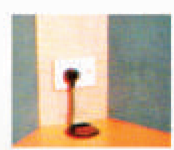

Wire Management

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary. Any infringement is liable for prosecution.

DE BONO FLEXCOM (INDIA) LTD.: Kukreja House, 1st Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055

Ph : 011-23540721, 23533936 **Fax :** 23533944 **Email :** debono@debonoindia.com

E-mail : delite@delitekom.com

ISO 9001 DNV CERTIFIED

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2015-17 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

MUNJAL SHOWA मुंजाल शोवा

मुंजाल शोवा लिमिटेड देश में टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योग में सभी प्रमुख ओ.ई.एम. के लिए शॉक एब्जोर्बर, फ्रंट फोर्क्स, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कंवेंशनल) और गैस स्प्रिंगो का सबसे बड़ा निर्माता है। निर्मित उत्पाद, गुणवत्ता और सुरक्षा के कड़े मानों के अनुरूप होते हैं। कम्पनी के उत्पाद बाधामुक्त, आरामदेह, चिरस्थायी, विश्वसनीय और सुरक्षित यात्रा के लिए जाने जाते हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, टीएस–16949, आईएसओ 14001, ओ.एच.एस.ए.एस. 18001 और टीपीएम प्रमाणित कम्पनी है। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

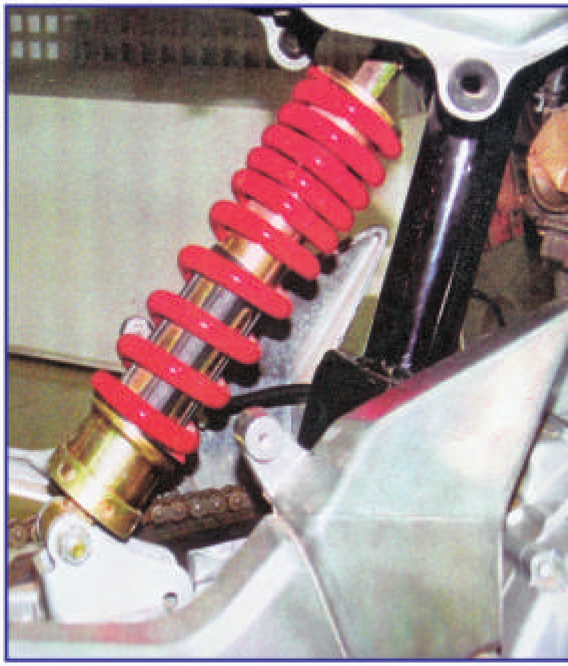

टीपीएम प्रमाणित कम्पनी

आईएसओ / टीएस–16949–2002 प्रमाणित

आईएसओ–14001 एवं
ओएचएसएएस–18001 प्रमाणित

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

- हीरो मोटोकोर्प लिमिटेड
- मारुती सुजुकी इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा कार्स इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा मोटर साइकल एवं स्कूटर इन्डिया (प्र0) लिमिटेड
- इन्डिया यामहा मोटर (प्र0) लिमिटेड

हमारा उत्पादन

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं0 9–11, मारुति इन्डस्ट्रीअल एरिया, गुड़गाँव। दूरभाष: 0124–2341001, 4783000, 4783100
प्लॉट नं0 26 इ एवं एफ, सेक्टर–3, मानेसर, गुड़गाँव। दूरभाष: 0124–4783000, 4783100
प्लॉट नं0 1, इन्डस्ट्रीअल पार्क–2, सालेमपुर गाँव, मेहदूद–हरिद्वार, उत्तराखण्ड दूरभाष: 0124–4783000, 4783100

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com